# शैक्षिक मंथन

( द्विभाषी मासिक )

*शैक्षिक क्षेत्र की प्रतिनिधि पत्रिका*

वर्ष : 8 अंक : 12 1 जुलाई 2016

( आषाढ़-श्रावण, विक्रम संवत् 2073 )



संरक्षक
**मुकुन्द कुलकर्णी**
**प्रो.के.नरहरि**

❖

परामर्श
**डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल**
**प्रो. जगदीश प्रसाद सिंघल**

❖

सम्पादक
**प्रो. सन्तोष पाण्डेय**

❖

उप सम्पादक
**विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी**
**भरत शर्मा**

❖

संपादक मंडल
**प्रो. नन्दकिशोर पाण्डेय**
**डॉ. नाथू लाल सुमन**
**डॉ. एस.पी. सिंह**
**डॉ. ओमप्रकाश पारीक**

❖

प्रबन्ध सम्पादक
**महेन्द्र कपूर**

❖

व्यवस्थापक
**बजरंग प्रसाद मजेजी**

प्रेषण प्रभारी
**बसन्त जिन्दल**
**नौरंग सहाय भारतीय**

कार्यालय प्रभारी
**आलोक चतुर्वेदी 9782873467**



प्रकाशकीय कार्यालय
**82, पटेल कॉलोनी, सरदार पटेल मार्ग,**
**जयपुर ( राज. ) 302001**
**दूरभाष : 9414040403**

दिल्ली ब्यूरो :
**शैक्षिक महासंघ सदन, 606/13,**
**कृष्णा गली नं.9, मौजपुर, दिल्ली-110053**
**दूरभाष : 011-22914799**

**E-mail:**
shaikshikmanthan@gmail.com
**Visit us at:**
www.shaikshikmanthan.com

**एक प्रति 20/- वार्षिक शुल्क 200/-**
**आजीवन ( दस वर्ष ) 1500/-**

पृष्ठ संयोजन : सागर कम्प्यूटर, जयपुर



**शैक्षिक मंथन मासिक में प्रकाशित सामग्री से संपादक मण्डल का सहमत होना आवश्यक नहीं है।**


## शिक्षा और खुशी का अन्योनाश्रित संबंध ❑ बजरंगी सिंह

**यदि शिक्षक खुशी और मानव उत्कर्ष के लिए गंभीरता से विचार करे तो मैं समझता हूँ कि दृष्टिकोण में कुछ बुनियादी बदलाव हो सकता है। इसके साथ ही शिक्षा को व्यवस्थित करने की भी जरूरत है। सबसे पहले शिक्षा के क्षेत्र में खुशी के लिए सबसे विचारणीय यह है कि विषय, कक्षा और तत्काल शिक्षण संदर्भ से परे देखने पर जो दिखाई देता है, औपचारिक शिक्षण संस्थाओं ने पूरे व्यक्ति के लिए, देशकाल के लिए कर रही हैं, उसे अन्य अवसरों एवं अनुभवों को एक श्रृंखला के रूप में पेश होना चाहिए।**

## अनुक्रम


| | | |
|---|---|---|
| 4. | खुशी व शिक्षा | - सन्तोष पाण्डेय |
| 6. | संयुक्त राष्ट्र संघ की योजनाओं से वैश्विक विकास | - प्रो. मधुर मोहन रंगा |
| 9. | शिक्षा ही खुशी का मार्ग | - डॉ. रेखा भट्ट |
| 13. | एकात्म मानव दर्शन बने, प्रसन्नता का आधार | - विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी |
| 18. | Education and Happiness | - Dr. A. K. Gupta |
| 20. | अंकों की दौड़ में प्रतिभा का अवमूल्यन | - जगमोहन सिंह राजपूत |
| 22. | उच्च शिक्षा के संकट | - कृष्ण कुमार |
| 25. | शिक्षा में बदलाव जरूरी | - डॉ. संतोष त्रिपाठी |
| 27. | ज्ञान और पढ़ाई | |
| 29. | राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्‌भव व विकास | - रितिका चौपड़ा |
| 32. | How to make a good teacher | |
| 34. | Rebuilding The University | - Niti Bhutani |
| 36. | शैक्षिक समाचार | |
| 39. | गतिविधि | |


## Education that leads to Happiness – Contentment

**❑ Dr. TS Girishkumar**

**In Nyaya Sutra, Maharishi Gautama speaks at length about knowledge. Knowledge worth the name must have the property of affecting the knower, or affectivity. Affectivity should imply refinement through knowing, being (un-purified) to becoming (purified or refined). It is through this refinement, a process of purification that one becomes Sanskrita, Cultured, and from this, the concept of Sanskriti comes into existence.**

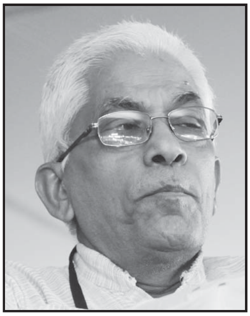

**शिक्षा मानव संवेदनाओं को जगाने सशक्त माध्यम है। शिक्षा मनुष्य को विवेकशील एवं तार्किक व्यक्ति बनाती है, जो उचित-अनुचित , आवश्यक-अनावश्यक में भेद करना सिखाती है। 'सा विद्या या विमुक्तये' मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है। शिक्षा का अर्थ है चिन्ता व तनाव मुक्त हो इच्छा रहित अवस्था ( desideratiurn ) को प्राप्त करना है, यही मुक्ति ( liberation ) मोक्ष है। तमसो मा ज्योतिर्गमय व विद्या अमृत मनुष्यते आदि शिक्षा के प्रति भारतीय दृष्टि को प्रकट करते हैं। आज का आर्थिक विकासवादी व भौतिकतावादी जीवन दर्शन विश्वास करता है कि समावेशी विकास द्वारा खुशी प्राप्त की जा सकती है।**

# खुशी व शिक्षा

**❑ सन्तोष पाण्डेय**

**संपादकीय**

संयुक्त राष्ट्र संगठन (यूएनओ) द्वारा मानव कल्याण हेतु अनेक कार्यक्रम व सूचकांक बनाये जा रहे हैं, जिनसे मानव कल्याण की दिशा में राष्ट्रों की तुलनात्मक स्थिति का ज्ञान हो सकता है। जलवायु अध्ययन व सुधार मानव संसाधन विकास सूचकांक व अन्य ऐसे ही सूचकांक एवं कार्यक्रम हैं। मानव कल्याण की दिशा में ही खुशी को मापने का प्रयास किया गया है व खुशी सूचकांक बनाया गया है। भूटान को विश्व का सर्वाधिक खुश राष्ट्र माना गया है। भारत जो गत वर्ष 117 वें स्थान पर था इस वर्ष 118 वें स्थान पर रहा है। मानव संसाधन विकास सूचकांक में भारत गत वर्ष 100 वें स्थान से खिसककर 105 वें स्थान पर आया है, जबकि अनेक निकट पड़ौसी देशों से भारत पीछे है। खुशी व मानव संसाधन विकास का शिक्षा, पर्यावरण, गरीबी, भूख, आर्थिक, सामाजिक, लैंगिक, क्षेत्रीय असमानताओं से गहरा अन्त: संबंध है। टिकाऊ विकास (स्टेनेबल डवलपमेंट) की अवधारणा व इसके अन्तर्गत दीर्घकालीन व तात्कालिक कार्यक्रम अपनाये गये हैं व इनकी प्राप्ति के समय आधारित लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं। मिलेनियम विकास कार्यक्रम व 2030 तक पूरा किया जाने वाला 17 सूत्रीय कार्यक्रम इसी दिशा में किये गये प्रयास हैं। ऐसे सभी कार्यक्रमों का लक्ष्य मानव के भौतिक व आध्यात्मिक जीवन को उन्नत कर खुशियों से परिपूर्ण बनाना है। शिक्षा का प्रसार व प्रचार खुशहाल समाज के निर्माण का महत्त्वपूर्ण अंश है। शिक्षा से विवेक व तार्किक व्यक्तित्व का विकास होता है। शिक्षा ही समान अवसर प्रदान कर सभी प्रकार की असमानताओं को मिटाने का महत्त्वपूर्ण अस्त्र बन सकती है। खुशहाल देश व समाज निर्मित करने के सत्रह सूत्रीय कार्यक्रम में सभी आयुवर्ग के व्यक्तियों को उत्तम जीवन प्रदान करना, समावेशी शिक्षा जिसमें सभी वर्गों को जीवन भर सीखने की सुविधा और समान व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्राप्त हो इसकी व्यवस्था, महिला सशक्तीकरण व रोजगार के अवसर का उन्मूलन करना, विभिन्न राष्ट्रों के बीच व्याप्त असमानता को दूर करने संबंधी लक्ष्य तय किये गये हैं। इनकी प्राप्ति हेतु कृषि के दीर्घकालीन विकास, औद्योगीकरण व नवाचारों को प्रेरित करने, आधुनिक ऊर्जा की उपलब्धि बढ़ाने संबंधी कार्यक्रम अपनाने। मानव निवास (Settlements) को समावेशी व सुरक्षित बनाने, उत्पादन व उपभोग को टिकाऊ बनाने, सामुद्रिक संसाधनों, को संरक्षित करने, जलवायु परिवर्तन, मरुस्थलीय पारिस्थिकी को संरक्षित करने, सभी के लिये दीर्घकालिक जल प्रबंधन करने के साथ-साथ समाज में सभी की न्याय व्यवस्था तक पहुँच को सुलभ बनाना व दीर्घकालीन विकास के लिये वैश्विक भागीदारी सुनिश्चित करने संबंधी बिन्दु शामिल किये गये हैं। इन सभी सूत्रों का लक्ष्य मानव जीवन को उन्नत, सरल, सुरक्षित बनाना है। इससे चिन्तामुक्त भयमुक्त समाज निर्मित हो सकेगा व मानव जीवन खुशी से युक्त हो सकेगा। शिक्षा इन सभी की प्राप्ति का केन्द्र बिन्दु है। शिक्षा को समावेशी व समानता आधारित बनाना होगा एवं सभी को शिक्षा के दायरे

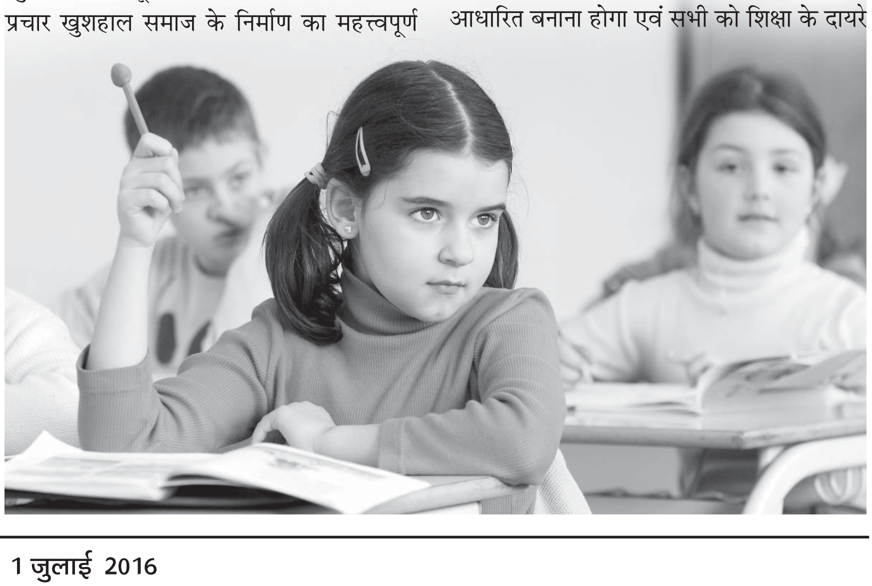

में लाना होगा। परन्तु प्रश्न तो यह है कि आखिर खुशी का अर्थ क्या है? क्या यह मात्र भौतिक विकास व प्रकृति पर नियंत्रण व शोषण द्वारा मनुष्य की अधिकतम आवश्यकताओं की पूर्ति से संबंधित है, अथवा मनुष्य की मानसिक स्थिति व सांसारिकता से लगाव (Attachment) से संबंधित है? इन प्रश्नों का उत्तर आवश्यक है। इसके लिये भारतीय दृष्टिकोण को समझना आवश्यक होगा।

**'खुशी' को समझने के लिये संतुष्टि व सुख, आनन्द व खुशी के अर्थ को स्पष्ट करना समीचीन होगा।**

भारत में सदियों से ही सादा व सरल प्रकृति आधारित जीवन का चलन रहा है। प्रकृति के अनुकूल जीवन शैली अपनाकर भारतवासी चिन्ता व तनाव मुक्त रहे हैं। यहाँ सन्तोषी रहे सदा सुखारे 'व' सर्वे भवन्तु सुखिन:' सादा जीवन उच्च विचार जीवन का दर्शन रहा है। भारत में चार्वाक ने भौतिकता व अधिकतम उपभोग की शिक्षा दी, जो समाज को अधिक स्वीकार्य नहीं हुई। भारतीय जीवन दर्शन में भौतिकता के स्थान पर आध्यात्मिकता की प्रधानता रही। धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष, चार पुरुषार्थ हैं जो मानव जीवन को सफल बनाते हैं। मनुष्य की अनन्त कामनाओं की पूर्ति के लिये अर्थ अर्थात साधन प्राप्ति व प्रयास आवश्यक है, ये सभी धर्म संगत होने चाहिये। धर्म का अभिप्राय 'पंथ' से नहीं वरन उचित अनुचित का भेद कर मानव हितकारी उचित, विवेक संगत प्रयासों से है। ऐसे प्रयासों का परिणाम जो सन्तोष के रूप में प्रकट होता है, मोक्ष है। मोक्ष कोई मृत्यु के पश्चात प्राप्त होने वाला पुरस्कार या दण्ड नहीं है। धर्मयुक्त आचरण व प्रयासों द्वारा साधन प्राप्त कर उनकी पूर्ति से उत्पन्न संतोष, संतुष्टि या आनन्द ही मोक्ष है, जो जीवन को सभी तनाव व चिन्ताओं से मुक्त कर 'खुशहाल' बनाता है। भगवान बुद्ध ने भी मध्यम मार्ग अपनाने का जीवन मंत्र दिया। सुख-दुख, शांति-अशांति में 'सम' अर्थात एक समान रहने वाला व्यक्ति ही खुश रह सकता है। सभी स्थितियों में 'सम' या समान रहने वाला व्यक्ति ही स्थितिप्रज्ञ माना जाता है। स्थितिप्रज्ञता की स्थिति ही 'खुशी' है। खुशी एक मानसिक स्थिति है। यह आन्तरिक (intransic) व बाह्य (instrumental) खुशी हो सकती है। आन्तरिक खुशी स्वयं के अन्दर होती है, यह किसी प्रकार की दशा (conditions) रहित होती है, सभी प्रकार के बाहरी तत्त्वों से अप्रभावित रहती है। दूसरी बाह्य खुशी (instrumental or conditional) अनेक शर्तों व दशाओं पर निर्भर करती है। इन दशाओं या शर्तों की पूर्ति होने पर ही बाह्य खुशी प्राप्त होती है। इसे आनन्द (plasure) भी कहा जा सकता है। वास्तव में आन्तरिक खुशी ही वास्तविक खुशी है। इसकी प्राप्ति के लिये पूर्णत: अनासक्त (totally detached) होना आवश्यक है। प्राय: साधारण जीवन में व्यक्ति को अनेक प्रकार के लगाव या आसक्ति (Attachment) होती है, यह आसक्ति ही वास्तविक खुशी की प्राप्ति में बाधक बनती है। आसक्ति का लगाव ही बाह्य तत्त्व या दशायें या शर्तें हैं जो खुशी को बाह्य बनाती है। बौद्ध दर्शन का आधार भी अनासक्ति है। जैन दर्शन में इसे अपरिग्रह द्वारा समझाया गया है। जीवन में व्यक्ति दु:ख, तनाव व चिन्ता तभी अनुभव करता है, जब उसे लगाव वाली वस्तु के खोने का भय होता है। यही दु:ख का कारण बनता है। यदि व्यक्ति इस लगाव से मुक्त हो जाता है, तो वह तटस्थ या अनासक्त बन आन्तरिक खुशी को अनुभव करता है। खुशी को समझने के लिये संतुष्टि (Satisfaction) व सुख और आनन्द व खुशी में भेद करना जरूरी है। आधुनिक भौतिकवादी संस्कृति में अधिक से अधिक आवश्यकताओं की पूर्ति से प्राप्त मनोस्थिति संतुष्टि है। इससे आनन्द तो प्राप्त होता है परन्तु दूसरी आवश्यकता के उदित होते ही यह भाव तिरोहित हो जाता है। यह बाह्य खुशी की दशायें या शर्तें हैं। ऐसे में व्यक्ति अपने मानस को इस प्रकार प्रशिक्षित करे कि उसे इन शर्तों या दबावों का अनुभव ही नहीं हो, तो यह सुख की अवस्था होगी। सुख ऐसी मानसिक अवस्था होती है, जिसमें सांसारिकता से लगाव पूर्णत: समाप्त हो जाता है, तब सुख-दुख, अमीरी-गरीबी, अभाव सुलभता, शान्ति-अशान्ति, चिन्ता, तनाव से मनुष्य ऊपर उठ जाता है। यही मोक्ष की अवस्था है। यह स्थिति आधुनिक विकास सिद्धान्त व मानव जीवन को अधिकतम आरामदायक बनाने के दर्शन के विपरीत स्थिति को प्रेरित करती है। जनसाधारण भी सामान्यत: सुख की अवस्था तक नहीं पहुँच पाता है। ऐसे खुशहाल समाज का निर्माण एक उचित लक्ष्य बन सकता है जिसमें विकास का लाभ उठाते हुये अधिकतम संतुष्टि से आनन्द तो हो परन्तु इस आनन्द के प्रति आसक्ति अथवा लगाव न हो तब चिन्ता, तनाव व भय नहीं होगा। यह ही वास्तविक खुशी होगी।

खुशी की इस अवस्था को प्राप्त करने में शिक्षा सर्वाधिक योग देती है। शिक्षा मानव संवेदनाओं को जगाने सशक्त माध्यम है। शिक्षा मनुष्य को विवेकशील एवं तार्किक व्यक्ति बनाती है, जो उचित-अनुचित , आवश्यक-अनावश्यक में भेद करना सिखाती है। 'सा विद्या या विमुक्तये' मुक्ति का मार्ग प्रशस्त करती है। शिक्षा का अर्थ है चिन्ता व तनाव मुक्त हो इच्छा रहित अवस्था (desideratiurn) को प्राप्त करना है, यही मुक्ति (liberation) मोक्ष है। तमसो मा ज्योतिर्गमय व विद्या अमृत मनुष्यते आदि शिक्षा के प्रति भारतीय दृष्टि को प्रकट करते हैं। आज का आर्थिक विकासवादी व भौतिकतावादी जीवन दर्शन विश्वास करता है कि समावेशी विकास द्वारा खुशी प्राप्त की जा सकती है। विकास का लाभ विश्वभर में सभी को समान रूप से उपलब्ध हो। शिक्षा इस दिशा में महत्त्वपूर्ण योग दे रही है परन्तु आधुनिक शिक्षा का दोष भी है कि यह व्यक्ति को पलायनवादी बनाती है।

मनुष्य खुशी की चाह में पलायनवादी बन रहा है। योग की शिक्षा व इसका पालन पलायन के स्थान पर शरीर व मन को तनाव रहित बना कर खुशी की प्राप्ति में सहायक होता है। भारत की आज की औपनिवेशिक तत्त्वों से भरपूर शिक्षा व्यवस्था तथा कथित धर्म निरपेक्षता के आधार पर 'धर्म' अर्थात उचित कार्यकरण से वंचित करती है। शिक्षा श्रेष्ठ मानवीय गुणों दया, धर्म, परोपकार, सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, जैसे श्रेष्ठ जीवन के लिये संस्कार उत्पन्न करने की शिक्षा नहीं देती है। जीवन मूल्य आधारित शिक्षा देना आज की परमं आवश्यकता है। श्रेष्ठ मानवीय मूल्यों द्वारा ही मानवीय जीवन को 'खुशीयुक्त' बनाना संभव हो सकता है। इसका सबसे बड़ा वाहक शिक्षा ही है। ❑

# संयुक्त राष्ट्र संघ की योजनाओं से वैश्विक विकास

**दीर्घकालिक विकास के सूत्रों की चौथी महत्त्वपूर्ण कार्य योजना, शिक्षा से संबंधित है। भारत में इस सन्दर्भ में विभिन्न प्रयास हुए हैं। बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012-17) के माध्यम से शिक्षा व कौशल विकास द्वारा मानव पूँजी निर्माण व विकास पर ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है। शिक्षा, प्रत्येक पंचवर्षीय योजना का केन्द्रीय अवयव रहा है, इसी कारण माध्यमिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण का उद्देश्य केन्द्र सरकार ने रखा है। योजना आयोग के अनुसार प्राथमिक शिक्षा में पहुँच (access) बढ़ी है। वर्ष 2017 तक सभी विद्यार्थियों को माध्यमिक शिक्षा की सुलभता सुनिश्चित करना यानी सकल नामांकन अनुपात (gross enrolment ratio) 100 प्रतिशत करना, समाज के आर्थिक रूप से कमजोर समूह के विशेष सन्दर्भ में, इसी प्रकार शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग की छात्राओं एवं ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे छात्रों का सकल नामांकन बढ़ाने का प्रयास है।**

❑ **प्रो. मधुर मोहन रंगा**

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में आज सम्पूर्ण विश्व प्रकृति, प्राकृतिक-संसाधनों, जैव-विविधता, जैव-नैतिकता, प्राकृतिक संसाधनों के दोहन के कारण पर्यावरण पर हो रहे अमर्यादित परिवर्तन पर चिंता व्यक्त कर रहा है, वैसे यह चिंता स्वाभाविक भी है क्योंकि उपरोक्त सभी विश्व-स्तरीय प्रभाव सम्पूर्ण मानवता, प्राकृतिक सन्तुलन प्राकृतिक सौन्दर्य, जैव-विविधता व ईश्वर द्वारा निर्मित वसुन्धरा पर प्रभाव डालता है। अतः प्रश्न उठता है कि इसके लिए जिम्मेदार कौन है? क्या हम आधुनिक वैज्ञानिक शोध, अनुसंधान, विभिन्न क्षेत्रों में जैसे-कृषि, अंतरिक्ष, चिकित्सा, स्वास्थ्य आदि पर वैज्ञानिक अवधारणाओं पर आधारित प्रयोग करना बंद कर दें, जिसमें पर्यावरण के विभिन्न घटकों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। अतः अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इस विषय पर गहन चिंतन-मनन होना आवश्यक होता है। हम वैज्ञानिक शोध व अनुसंधान करें, परन्तु प्रकृति, मानवता, जैव-विविधता, प्राकृतिक-संसाधनों आदि पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े इसके लिए सावचेत रहें। प्रकृति प्रदत्त सभी संसाधनों का सीमित उपयोग कर आने वाली पीढ़ी के लिए उनकी उपादेयता का भी संज्ञान लें, इसे ही दीर्घकालिक विकास (sustainable development) की संज्ञा प्रदान की गई है। आज सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के युग में सम्पूर्ण विश्व सिमट कर एक विश्व-ग्राम (global village) हो गया है। सभी राष्ट्रों की एक दूसरे पर निर्भरता बढ़ती जा रही है व पर्यावरण में वैश्विक स्तर पर होने वाले परिवर्तन से सम्पूर्ण विश्व परिचित भी है व चिंतित भी। इसी कारण संयुक्त राष्ट्र संघ ने सम्पूर्ण विषय का संज्ञान लेते हुए दीर्घकालिक विकास या टिकाऊ विकास के लिए 17 उद्देश्य बताये हैं। प्रस्तुत आलेख में सभी उद्देश्यों का संक्षिप्त परिचय देते हुए, चौथा उद्देश्य, जो शिक्षा से

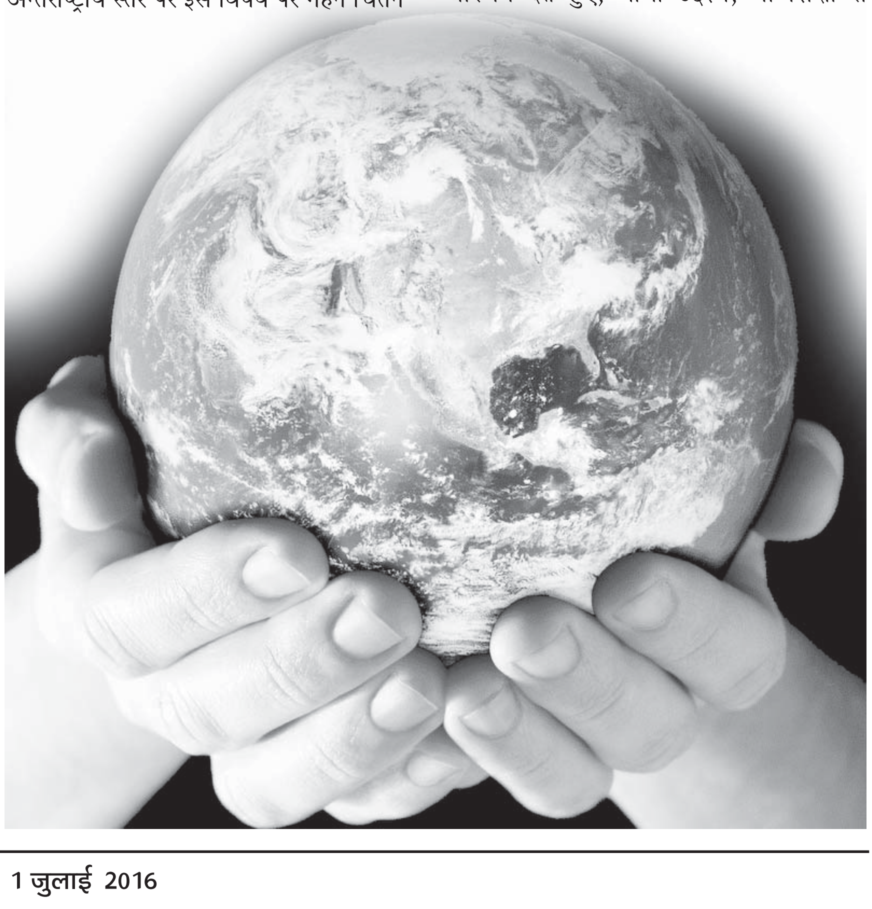

संबंधित है, का विवरण भारत के सन्दर्भ में देने का प्रयास किया गया है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने 25 सितम्बर, 2015 में संकल्पबद्धता (Resolution A/RES/070/1 के अन्तर्गत दीर्घकालिक विकास के उद्देश्यों (sustainable developments goals, SDG) की अवधारणा रखी । यह हमारे ''संसार में रूपान्तरण'' (Transforming Our World : the 2030 SDGs की आधारशिला पर अवलम्बित है। यह अंतरशासकीय (Intergovernmental) समझौता है, जिसमें 17 उद्देश्य व 169 लक्ष्य (target) हैं। यह 2015 के विकास कार्य विवरण (agenda) के बाद के उद्देश्य हैं, इससे पूर्व सहस्राब्दी विकास उद्देश्य (Millennium Development Goals, MDGs) रखे गये थे। संकल्पबद्धता के तहत् (Resolution A/RES/66/288) ''भविष्य जो हमें चाहिए'' (Future We Want) के सिद्धान्त को विभिन्न, 193 देशों ने स्वीकार किया है। इससे पूर्व, 19 जुलाई, 2014 को संयुक्त राष्ट्र सामान्य परिषद् (general assembly) ने दीर्घकालिक विकास पर खुले कार्यकारी समूह में (Open Working Group) इस पर विचार-मंथन किया। दीर्घकालिक विकास के उद्देश्यों का इतिहास पुराना है, 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान मे ''मानव व पर्यावरण'' के (Human and Environment) विषय पर सम्मेलन का आयोजन हुआ व पर्यावरणीय प्रभाव पर विचार विमर्श किया। 1983 तक संयुक्त राष्ट्र संघ में ''पर्यावरण व विकास'' (Environment and Development) पर विश्व स्तरीय आयोग का गठन नहीं हुआ था। 1992 में ब्राजील में रियो सम्मेलन (Rio conference), संयुक्त राष्ट्र संघ के तत्वावधान में ''पर्यावरण व विकास'' पर आयोजित किया गया। इसमें सूची कार्य विवरण (Agenda-21) पारित किया गया। इसमें पर्यावरण प्राकृतिक संसाधनों व कार्बन उत्सर्जन पर चर्चा की गई 20 वर्ष बाद रियो सम्मेलन (Rio+20 conference) में ''भविष्य जो हमें चाहिए (Future We Want) पर संकल्पबद्धता व्यक्त की गई, इसमें विभिन्न राष्ट्रों के राष्ट्राध्यक्षों ने भाग लिया। सहस्राब्दी विकास उद्देश्यों (Millennium Development goals, MDGs) को 2015 तक पूरा करना था। इसके पश्चात् 2015-2030 तक नवीन दीर्घकालिक विकास उद्देश्यों को पूरा करने का प्रस्ताव पारित किया गया। अतः विश्व स्तर पर, वैश्विक दृष्टि (global vision) के अनुसार दीर्घकालिक विकास में, सामाजिक विकास, पर्यावरण साम्यता, समावेशी आर्थिक वृद्धि (inclusive economic growth), शांति व सुरक्षा आदि विषय हैं। इसे 2015 पश्चात् विकास कार्य विवरण (Post 2015 development agenda) भी कहते हैं। दीर्घकालिक विकास के 17 बिन्दु संक्षेप में निम्न प्रकार है- प्रत्येक स्तर की गरीबी खत्म करना, दीर्घकालिक कृषि को प्रोत्साहन के साथ भूख खत्म करना, सभी आयु वर्गों के लोगों के लिए उत्तम जीवन प्रदान करना, समावेशी शिक्षा, समान व गुणवत्तापूर्ण शिक्षा सभी वर्गों को जीवनपर्यन्त अधिगम की सुविधा, महिला, बालिका सशक्तीकरण, दीर्घकालिक जल प्रबन्धन सभी के लिए, आधुनिक ऊर्जा की उपलब्धता, रोजगार, दीर्घकालिक आर्थिक विकास, समावेशी औद्योगिकीकरण व नवाचारों को प्रोत्साहन, विभिन्न राष्ट्रों के मध्य असमानता को दूर करना, शहरों में मानव निवास (Settlements) को समावेशी व सुरक्षित बनाना, उत्पादन व उपभोग को दीर्घकालिक बनाना, जलवायु परिवर्तन का संज्ञान लेना, समुद्री संसाधनों व समुद्र का संरक्षण, मरुस्थलीय पारिस्थितिकतंत्र का संरक्षण व सम्वर्द्धन, न्याय तक समाज की पहुँच को सुलभ बनाना व दीर्घकालिक विकास के लिए वैश्विक भागीदारी को सुनिश्चित करना। उपरोक्त सभी उद्देश्यों को 2030 तक पूरा करना है।

दीर्घकालिक विकास के सूत्रों की चौथी महत्त्वपूर्ण कार्य योजना, शिक्षा से संबंधित है। भारत में इस सन्दर्भ में विभिन्न प्रयास हुए हैं। बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012-17) के माध्यम से शिक्षा व कौशल विकास द्वारा मानव पूँजी निर्माण व विकास पर ध्यान केन्द्रित किया जा रहा है। शिक्षा, प्रत्येक पंचवर्षीय योजना का केन्द्रीय अवयव रहा है, इसी कारण माध्यमिक शिक्षा के सर्वव्यापीकरण का उद्देश्य केन्द्र सरकार ने रखा है। योजना आयोग के अनुसार प्राथमिक शिक्षा में पहुँच (access) बढ़ी है। वर्ष 2017 तक सभी विद्यार्थियों को माध्यमिक शिक्षा की सुलभता सुनिश्चित करना यानी सकल नामांकन अनुपात (gross enrolment ratio) शत-प्रतिशत करना, समाज के आर्थिक रूप से कमजोर समूह के विशेष सन्दर्भ में, इसी प्रकार शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग की छात्राओं एवं ग्रामीण क्षेत्रों में रह रहे छात्रों का सकल नामांकन बढ़ाने का प्रयास है। बारहवीं योजना के लिए केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकारों के बीच साझा खर्च 50:50 में परिवर्तित किया जायेगा जबकि उत्तर पूर्वी राज्यों के लिए खर्च 90:10 होगा। इसी योजना में विद्यालय के औसत वर्ष (Mean year of schooling) 07 वर्ष प्राप्त करने का लक्ष्य है। 11200 उच्च माध्यमिक विद्यालयों को क्रमोन्नत करना, छात्रवृत्ति सुविधा व आधारभूत संरचना बढ़ाना है। 2020 तक अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिधारण को प्राप्त कर माध्यमिक स्तर की शिक्षा में अन्तर्राष्ट्रीय पहँच (International access) प्राप्त करना है। तभी राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के उद्देश्य प्राप्त होंगे। केन्द्र सरकार द्वारा पोषित सर्वशिक्षा अभियान के अंतर्गत प्राथमिक शिक्षा में सकल नामांकन दर बढ़ी है। सूचना एवं संचार तकनीकी के माध्यम से शिक्षा के महत्त्वपूर्ण उद्देश्यों व लक्ष्यों को ई-शिक्षा, (e-education), ई-अधिगम (e-learning), आभासी प्रयोगशालाएँ (virtual laboratories), ऑन-लाइन शिक्षक उपलब्धता, शिक्षा उपग्रहों एवं 'डाइरेक्ट टू होम' (DTH) धरातल का

उपयोग किया जा रहा है। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी द्वारा राष्ट्रीय मिशन संचालित है। इसके अंतर्गत साक्षात् (SAKSHAT) नामक एक बेब आधारित शिक्षा पोर्टल बनाया गया है। तकनीकी आधारित अधिगम हेतु नेशनल प्रोग्राम ऑन टेक्नोलॉजी एन्हान्सड लर्निंग (NPTEL) नामक राष्ट्रीय पोर्टल द्वारा अभियांत्रिकी, विज्ञान एवं मानविकी विषयों में ऑन-लाइन वेब आधारित एवं वीडियो पाठ्यक्रम संचालित हैं। राष्ट्रीय मिशन द्वारा वित्तपोषित राष्ट्रीय पुस्तकालय, सूचना सेवाएँ, विद्वत् विषयवस्तु हेतु आधारभूत ढाँचे (N-LIST) के द्वारा शिक्षण संस्थाओं तक विद्वत् विषयवस्तु पहुँचाया जा रहा है।

इसके अंतर्गत विश्वविद्यालय अनुदान आयोग-इन्फोनेट, इनडेस्ट (Indian Net Digital Library for Engineearing Science and Technology,INDSET), इनफ्लिब-नेट (Information Library Network INFLIB-NET) आदि के माध्यम से ई-जर्नल व ई-पुस्तकों का पाठन हो रहा है। सतत् मूल्यांकन के लिए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने विकल्प आधारित क्रेडिट व्यवस्था लागू करने के लिये सभी विश्वविद्यालयों को निर्देशित किया है इस योजना के तहत् उच्चशिक्षा तंत्र में समानता, दक्षता व उत्कृष्टता प्राप्त हो सकेगी। क्रेडिट आधारित सेमेस्टर प्रणाली में नियमित अध्ययन, मूल्यांकन के साथ ही अधिगम में क्षैतिजिक व ऊर्ध्व गतिशीलता बढ़ेगी। पाठ्यचर्या निर्धारण में खुलापन होगा व विद्यार्थी अतिरिक्त विषय भी पढ़ सकेगा। जीवन पर्यन्त पढ़ाई के अवसर प्रदान करने हेतु हमारे देश में खुले विश्वविद्यालय कार्यरत हैं, जिनमें श्रमसाध्य व्यक्ति अपनी पढ़ाई पत्राचार माध्यम से कर सकते हैं। राष्ट्रीय अध्यापक शिक्षा परिषद (NCTE) ने विभिन्न पाठ्यक्रमों को पढ़ाने, अधिगम को प्रभावी बनाने, प्रोजेक्ट, विचार-विमर्श, सामूहिक प्रकटीकरण, व्यक्ति अध्ययन (case study), विद्यार्थी निरीक्षण, समुदाय में समन्वय, वार्तालाप, सामाजिक, सांस्कृतिक वातावरण के सन्दर्भ में सुझाव देकर अच्छे शिक्षण निर्माण की प्रक्रिया में पाठ्यक्रमों को दो वर्षीय बनाया है। उच्च शिक्षा के सुधार के लिए लोकसभा में विभिन्न बिल लम्बित है, उनके पारित होने से भी शैक्षिक उन्नयन होगा। वर्तमान में भारत में विद्यार्थियों का सकल नामांकन अनुपात 19 प्रतिशत है, जबकि विश्व स्तर पर औसत 27 प्रतिशत है। भारत सरकार ने वर्ष 2020 तक इसे 30 प्रतिशत तक ले जाने का प्रावधान रखा है। उच्च शिक्षा के अखिल भारतीय सर्वेक्षण (All India Survey on Higher Education) भी सम्पूर्ण देश के उच्च शिक्षण संस्थाओं से आँकड़े एकत्रित कर शैक्षिक सुधारों व कार्ययोजना हेतु सुझाव देता है। 12 वीं पंचवर्षीय योजना में शिक्षा की उत्कृष्टता, समानता व प्रसार पर अधिक ध्यान दिया गया। केन्द्र द्वारा पोषित राष्ट्रीय उच्च शिक्षा अभियान को राज्य के उच्च शिक्षा संस्थानों को वित्तीय सहायता देने हेतु बनाया गया। इससे शिक्षा में पहुँच, समानता व गुणवत्ता पर प्रभाव होगा। उच्च शिक्षा के द्वारा भारत में आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक रूपान्तरण उचित दिशा में होगा। शैक्षिक गुणवत्ता के लिए उच्च शिक्षा में ढाँचेगत परिवर्तन का प्रयास भी चल रहा है। 21 मार्च, 2015 को नई शिक्षा नीति के सन्दर्भ में आयोजित बैठक में गुणवत्ता के लिए अभिशासन में सुधार, उच्चशिक्षा में कौशल विकास को शामिल करना, विनियमन की गुणवत्ता बेहतर बनाना, प्रौद्योगिकी समर्पित शिक्षा के अवसर, जेंडर व सामाजिक अन्तरालों को पाटने, छात्र सहयोग प्रणालियों को बनाये रखना, अनुसंधान व नवाचार को बढ़ावा देना आदि विषयों पर चर्चा कर राज्य सरकारों को इनके अनुसार कार्य योजना बनाने व क्रियान्वयन हेतु निर्देशित किया। हमारे यहाँ राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यानयन परिषद् (NAAC) विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, अखिल भारतीय तकनीकी परिषद्, अध्यापक शिक्षा राष्ट्रीय परिषद् आदि की गुणवत्ता सुनिश्चित करने हेतु प्रयासरत है। उपरोक्त कुछ प्रयासों से यह स्पष्ट हो जाता है कि संस्थागत उत्कृष्टता, शोध नवाचार, उत्कृष्ट शिक्षण, सकल नामांकन दर, शिक्षा की पहुँच तथा संसाधन व आधारभूत संरचना में परिवर्तन हेतु केन्द्र एवं राज्य स्तर पर प्रयास किये जा रहे हैं। सभी के संयुक्त प्रयासों से भारत खुशहाली के रिकार्ड में अग्र पायदान पर होगा क्योंकि दीर्घकालिक विकास हमारे मूल में है। ❑

(विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विज्ञान विभाग,
सरगुजा विश्वविद्यालय, अम्बिकापुर, छत्तीसगढ़)

**गत वर्षों में चरमराती वैश्विक अर्थव्यवस्था में भारतीय परंपरागत व्यवसाय एवं जीवन शैली के कारण ही स्थिरता बनी रही। अब विश्व में भारतीय व्यावसायिक निवेश विश्वसनीय माना जाने लगा है। यही वजह है कि आशावादी दृष्टिकोण पर होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय सर्वे में भारतीय युवा सर्वोत्कृष्ट प्रदर्शन कर पाते हैं। अत: शिक्षा में भारतीय परंपरागत कौशल को व्यावसायिक स्तर पर विकसित करके युवाओं को आशावान बनाये रखा जा सकता है। उनमें खुशी, स्फूर्ति और उत्साह को जीवन्त बनाये रखने में भारतीय शिक्षा उपयोगी सिद्ध होगी तथा युवा प्रतिभा के पलायन से होने वाली अप्रत्यक्ष आर्थिक हानि और अर्थव्यवस्था के क्षरण को रोका जा सकेगा।**

# शिक्षा ही खुशी का मार्ग

❑ डॉ. रेखा भट्ट

वर्तमान में विश्व के प्रत्येक देश में भौतिक एवं आर्थिक संपन्नता को ही लोगों की खुशी का आधार माना जाता है। भौतिकता एवं आर्थिकता की प्राप्ति के उद्देश्य से ही शिक्षा प्राप्त की जाती है, किन्तु भारत में प्राचीन काल से ही शिक्षा का उद्देश्य मानव जीवन में सत्य की खोज एवं आंतरिक खुशी प्राप्त करना रहा है। प्राचीन भारत में ग्राम्य एवं कृषि आधारित अर्थव्यवस्था में सभी का योगदान था। उत्पादन हेतु सभी वर्गों को व्यवसाय करने की स्वतंत्रता थी। इसलिए समाज जीवन में किसी प्रकार की प्रतिस्पर्धा नहीं थी। देश के प्राकृतिक संसाधनों का सीमित एवं आवश्यकतानुसार उपयोग होता था। शिक्षा ज्ञान आधारित थी, विश्व की सभी सभ्यतायें भारत के बताये मार्ग पर चलती थी। इसीलिए भारत विश्व गुरु कहलाया। समय-समय पर भारत में होने वाले विदेशी आक्रमणों और राजनैतिक पराधीनता के कारण यहाँ की मूलभूत सामाजिक व्यवस्था और शिक्षण प्रणाली छिन्न-भिन्न हो गई।

समय के साथ आधुनिक सामाजिक व आर्थिक विकास की वैश्विक दौड़ से भारतीय शिक्षा में उदारीकरण व निजीकरण का समावेश हुआ। परिणामत: भारत में शिक्षा से मानवीय विकास और खुशहाली के उद्देश्य समाप्त हो गये और शिक्षा पूर्णरूप से व्यवसायिक हो गई। शिक्षा पूर्णत: वैश्विक बाजार की माँगों को पूर्ण करने के लिये निर्धारित होती गई। उत्तम शिक्षा प्राप्त करने के लिये आर्थिक रूप से सक्षम होना आवश्यक हो गया। उच्च कोटि की शिक्षा से ही श्रेष्ठ सामाजिक व आर्थिक स्थिति प्राप्त की जा सकती है, किन्तु यह स्थिति भारत के एक बहुत छोटे वर्ग पर लागू होती है। अधिकाँश भारतीय आज भी उच्च स्तरीय शिक्षा पाने में असमर्थ हैं। राजकीय स्तर पर सार्वजनिक शिक्षा जनसाधारण को अत्यन्त कम दरों पर उपलब्ध है, अत: यह गुणवत्तायुक्त नहीं बन पाई है।

शिक्षा में ज्ञान के रूप में ऊर्जा निहित होती है अत: रोजगार एवं अर्थोपार्जन करना मात्र ही शिक्षा का उद्देश्य नही होता। आर्थिक संपन्नता स्थायी खुशी नहीं दे सकती अत: कुछ समय पश्चात् उत्पन्न रिक्तता को भरने में ज्ञान ही सहायक होता है, जो मानसिक रूप से आंतरिक उपलब्धियों को प्राप्त करने के लिये ऊर्जा का संचरण करता है। यह उपलब्धि वास्तविक खुशी प्रदान करती है तथा चिरस्थायी होती है।

शिक्षा द्वारा व्यक्ति आदर्श स्थितियों का अनुसरण करता है तथा व्यक्तिगत गुणों को विकसित करता है। इस प्रकार व्यक्ति पारिवारिक और सामाजिक दायित्वों का निर्वहन करते हुए जीवन में सभी को खुशियाँ बाँटता है। भारतीय शिक्षा का दर्शन है ''सर्वे भवन्तु सुखिन:''। प्राचीन भारतीय शिक्षण में समाहित मानवीय मूल्य जैसे स्नेह,

समर्पण, निष्ठा, कर्मठता को व्यक्ति जीवन में आत्मसात करता है और पारिवारिक व सामाजिक कर्तव्यों का निर्वहन करता है।

पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली से हमें आर्थिक लाभ की वृत्ति एवं आधुनिक जीवन शैली मिली है किन्तु इससे व्यक्ति अपने भौतिक लक्ष्यों में सिमट गया है। आधुनिक परिवार में पारस्परिक सहयोग व सद्भाव के अभाव में व्यक्ति एकाकी और अवसाद तथा तनाव में जीवन जीता है। आधुनिक शिक्षा केवल पढ़ने लिखने और सीखने से जुड़ी है, जबकि शिक्षा सकारात्मक तरीके से जीना सिखाती है। यह व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक व बौद्धिक रूप से सुदृढ़ भी बनाती है। भारत में विद्यालय और महाविद्यालय मात्र औपचारिक विद्या अध्ययन के केन्द्र नही हैं, यहाँ संस्कारों को ज्ञान के माध्यम से सींचा जाता है। विद्यार्थियों में आत्मविश्वास और साहस जैसे गुणों को पल्लवित किया जाता है। वे सम्पूर्ण मानवता की सेवा में जीवन को सफल बनाते हैं और सुख समृद्धि पाने योग्य बनते हैं। शिक्षा द्वारा प्राप्त योग्यता का समाज के हित में उपयोग करने पर प्रत्येक देशवासी खुशहाल हो सकेगा। खाद्य, आपूर्ति वैकल्पिक ऊर्जा व पर्यावरण जैसी अनेक वैश्विक चुनौतियों का सामना शिक्षित व्यक्ति ही कर सकता है। शिक्षा मनुष्य में शोध व अन्वेषण द्वारा समस्याओं के समाधान करने की क्षमता विकसित करती है। शिक्षा से व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है तथा व्यक्ति सामाजिक समस्याओं जैसे गरीबी, भुखमरी, असमानता, आदि के निराकरण के प्रति जागरूक होता है। शिक्षा द्वारा व्यक्ति व परिवार के स्वास्थ्य व पोषण में सुधार होता है। वह रोगों से लड़ने व बचाव करने में सक्षम होता है। इस प्रकार शिक्षा मृत्यु दर में भी कमी लाती है। शिक्षा ही असफलता को सफलता की एक सीढ़ी के रूप में मानते हुए, आगे बढ़ने का हौसला देती है।

शिक्षा व्यक्ति को अपने आस-पास के वातावरण और प्रकृति के प्रति संवेदनशील बनाती है। जो खुशहाली के लिये पर्यावरणीय चेतना जाग्रत करती है। शिक्षा जीवन में जो खुशी प्रदान करती है वह एक अच्छे निवेश की तरह है जो बडे पूँजी निवेश से भी प्राप्त नहीं की जा सकती। शिक्षित व्यक्ति में कठिन परिस्थितियों का सामना करने की सामर्थ्य विकसित होती है- निर्णय लेने तथा सही गलत में फर्क करने की क्षमता ही शिक्षित व्यक्ति को भ्रष्टाचार और सामाजिक बुराइयों से लड़ने का साहस देती है एवं सामाजिक परिवर्तन लाती है।

जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं एवं पारिवारिक खुशी हेतु आजीविका महत्वपूर्ण होती है। आजीविका प्राप्ति के लिये शिक्षा के महत्व को देखते हुए सामान्य व गरीब व्यक्ति भी भारी ऋण लेकर महँगी किन्तु गुणवत्तापूर्ण शिक्षा पाने का प्रयास करता है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में निर्धारित पाठ्यक्रम तथा रोजगार प्राप्ति में किसी प्रकार का सामंजस्य नही है। आज उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थी भी रोजगार से वंचित रहता है। लाखों बेरोजगार युवा निराशा एवं असुरक्षा से ग्रसित हो रहे हैं। उनके सुखद भविष्य के लिये शिक्षा नीति के उद्देश्यों तथा उसके क्रियान्वयन में समन्वय करने की आवश्यकता है। भारत में विश्व की सर्वाधिक युवा जनसंख्या (मानव संसाधन) उपलब्ध हैं किन्तु उनका कौशल विकास नही होने के कारण हम विश्व के विकसित देशों के मुकाबले में तकनीकी संसाधनों के समतुल्य नहीं पहुँच सके हैं। जबकि विदेशी कंपनियों में भारतीय प्रतिभायें उच्च वेतन पर कार्य का बोझ व मानसिक तनाव झेलने को मजबूर है। आज की भौतिक चकाचौंध और आर्थिक लाभ में भारतीय परंपरागत कौशल पीछे छूटता जा रहा है।

वर्तमान भारतीय शिक्षा क्षेत्र को सदैव लाभ कमाने के उद्योग के रूप में रखे जाने एवं राजनैतिक हस्तक्षेप बने रहने से शिक्षा क्षेत्र का स्वतंत्र व स्वायत्य विकास नही हो सका है। शिक्षा को सदैव सर्वाधिक उपेक्षित रखने से वैश्विक पटल पर भारतीय शिक्षा का मौलिक स्वरूप कभी स्थापित नही हो सका। भारतीय शिक्षण असीमित पुरुषार्थ का यथेष्ट परिणाम देने में असमर्थ रहा। वर्तमान में भारत में 57 प्रतिशत शिक्षित युवा ऐसे हैं जो उपलब्ध रोजगार पाने के योग्य नहीं है। अनगिनत शिक्षण संस्थानों से उच्च शिक्षा प्राप्त बेरोजगारों की संख्या बढ़ी है।

गत वर्षों में चरमराती वैश्विक अर्थव्यवस्था में भारतीय परंपरागत व्यवसाय एवं जीवन शैली के कारण ही स्थिरता बनी रही। अब विश्व में भारतीय व्यावसायिक निवेश विश्वसनीय माना जाने लगा है। यही वजह है कि आशावादी दृष्टिकोण पर होने वाले अन्तर्राष्ट्रीय सर्वे में भारतीय युवा सर्वोत्कृष्ट प्रदर्शन कर पाते हैं। अत: शिक्षा में भारतीय परंपरागत कौशल को व्यावसायिक स्तर पर विकसित करके युवाओं को आशावान बनाये रखा जा सकता है। उनमें खुशी, स्फूर्ति और उत्साह को जीवन्त बनाये रखने में भारतीय शिक्षा उपयोगी सिद्ध होगी तथा युवा प्रतिभा के पलायन से होने वाली अप्रत्यक्ष आर्थिक हानि और अर्थव्यवस्था के क्षरण को रोका जा सकेगा। शिक्षा क्षेत्र को, उद्यमिता और कौशल विकास के माध्यम से सीमित संसाधनों को नियंत्रित व समायोजित उपयोग करते हुए, सशक्त किया जा सकेगा। शिक्षा द्वारा आर्थिक विकास करने के लिये देश में ही तकनीकी विकास की प्रबल आवश्यकता है।

शिक्षा द्वारा ही उसके संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास होगा शिक्षा द्वारा विद्यार्थी का भविष्य सुरक्षित होगा। तभी वह राष्ट्र और संस्कृति के विकास में अपना योगदान सुनिश्चित करेगा। शिक्षा द्वारा ग्रहण किये गये ज्ञान को यथार्थ लाभ एवं मानवीय हितों में रूपांतरित करने की क्षमता प्रत्येक नागरिक में विकसित करनी होगी तभी चारों ओर सतत् व स्थायी खुशी व्याप्त होगी।

आने वाले समय में प्रशिक्षित युवाओं के अनगिनत क्षेत्रों में रोजगार के लिये पूरा विश्व भारत की ओर देखेगा। भारत में शिक्षा क्षेत्र को उन्नत करके ही स्तरीय दक्षता व प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकेगा और आने वाली पीढ़ियाँ खुशहाल हो सकेंगी।❑

*(व्याख्याता रसायन शास्त्र, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर)*

# शिक्षा और खुशी का अन्योनाश्रित संबंध

**यदि शिक्षक खुशी और मानव उत्कर्ष के लिए गंभीरता से विचार करे तो मैं समझता हूँ कि दृष्टिकोण में कुछ बुनियादी बदलाव हो सकता है। इसके साथ ही शिक्षा को व्यवस्थित करने की भी जरूरत है। सबसे पहले शिक्षा के क्षेत्र में खुशी के लिए सबसे विचारणीय यह है कि विषय, कक्षा और तत्काल शिक्षण संदर्भ से परे देखने पर जो दिखाई देता है, औपचारिक शिक्षण संस्थाओं ने पूरे व्यक्ति के लिए, देशकाल के लिए कर रही हैं, उसे अन्य अवसरों एवं अनुभवों को एक श्रृंखला के रूप में पेश होना चाहिए। पाठ्येत्तर गतिविधि में शामिल होने का अवसर भी मिलना चाहिए और दूसरी ओर अनौपचारिक शिक्षा, समुदाय, अधिगम और अधिक सकारात्मक रूप में शिक्षा को शामिल किया जाना चाहिए। यहाँ राष्ट्रीय और राज्य पाठ्यक्रम के बड़े क्षेत्रों की जरूरतों पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए।**

❑ **बजरंगी सिंह**

खुशी, शिक्षा का मूल उद्देश्य होना चाहिए और एक अच्छी शिक्षा व्यक्तिगत और सामूहिक खुशी के लिए बेहतर योगदान दे सकती है। चिंता का विषय यह है कि आज स्कूली शिक्षा और अनौपचारिक शिक्षा तेजी से आर्थिक कमाई की ओर निर्दिष्ट हो रही है। परिणामत: स्कूली शिक्षा के भीतर शैक्षिक अनुभव में संकुचन बढ़ता जा रहा है। राज्य, प्रायोजित अनौपचारिक शिक्षा आजीवन सीखने और अब ऐसा लगता है कि तेजी से शिक्षा में जनमानस की भलाई के लिए और उन्हे जोड़ने की क्षमता कम हो गई है। खुशी के नए विज्ञान के साथ संबंध पर यकीन किया जाए तो आधुनिक शिक्षा नीति में गहराई से गुमराह किया है।

रोजमर्रा की जिंदगी में खुशी के कई समकालीन अन्वेषण व्यक्तिपरक पढ़ने पर आधारित हो गये हैं। जाँचकर्ताओं द्वारा वर्तमान भावनाओं के बारे में पूछते हैं कि वे एक विशेष समय और स्थान में खुशी के कुछ उपाय की स्थापना भविष्य आदि के बारे में इससे उम्मीद कर रहे हैं कि क्या लोगों की पहचान और इसके बारे में बात कर सकते हैं। यह दृष्टिकोण विश्वास के रूप में इस तरह अच्छा लग रहा है। लोगों के कथनों को सही मानें तो समृद्धशाली जीवन नेतृत्व करने के लिए उनके साथ-साथ समय एवं समाज के संबंध में सकारात्मक कार्य करने की प्रवृत्ति बढ़ती है, जिसे व्यक्तिगत रूप से संतुष्ट और विकसित करने की जरूरत है।

मेरा व्यक्तिगत मानना है कि यदि शिक्षक खुशी और मानव उत्कर्ष के लिए गंभीरता से विचार करे तो मैं समझता हूँ कि दृष्टिकोण में कुछ बुनियादी बदलाव हो सकता है। इसके साथ ही शिक्षा को व्यवस्थित करने की भी जरूरत है। सबसे पहले शिक्षा के क्षेत्र में खुशी के लिए सबसे विचारणीय यह है कि विषय, कक्षा और तत्काल शिक्षण संदर्भ से परे देखने पर जो दिखाई देता है, औपचारिक शिक्षण संस्थाओं ने पूरे व्यक्ति के लिए, देशकाल के लिए कर रही हैं, उसे अन्य अवसरों एवं अनुभवों को एक श्रृंखला के रूप में पेश होना चाहिए। पाठ्येत्तर गतिविधि में शामिल होने का अवसर भी मिलना चाहिए और दूसरी ओर अनौपचारिक शिक्षा, समुदाय, अधिगम और अधिक

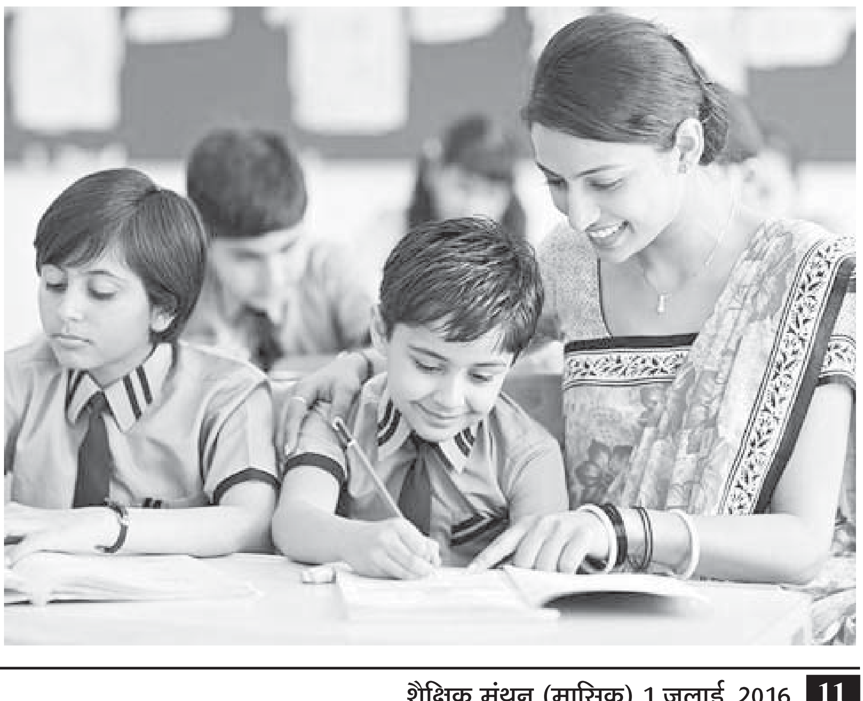

सकारात्मक रूप में शिक्षा को शामिल किया जाना चाहिए। यहाँ राष्ट्रीय और राज्य पाठ्यक्रम के बड़े क्षेत्रों की जरूरतों पर अधिक जोर दिया जाना चाहिए।

''तमसो मा ज्योतिर्गमय'' अर्थात अंधकार से मुझे प्रकाश की ओर ले जाओ, यह प्रार्थना भारतीय संस्कृति का एक स्तंभ है। प्रकाश में व्यक्ति को सब कुछ दिखाई देता है, अंधकार में नहीं। प्रकाश से तात्पर्य ज्ञान से है। ज्ञान से व्यक्ति का अंधकार नष्ट होता है। उसका वर्तमान और भावी जीवन जीने योग्य बनाता है। ज्ञान से उसकी इंद्रियाँ जाग्रत होती हैं। उसकी कार्य क्षमता बढ़ती है जो उसके जीवन को प्रगति के पथ पर ले जाती है। यानी जीवन सुखद हो जाता है। शिक्षा का क्षेत्र सीमित न होकर विस्तृत है। जैसे-जैसे हम शिक्षा के क्षेत्र में आगे बढ़ते जाते हैं, वैसे-वैसे हमारा ज्ञान विस्तृत हो जाता है। ज्ञान का अर्थ केवल शब्द ज्ञान नहीं, अपितु अर्थज्ञान है।

विद्या सर्वश्रेष्ठ धन है। विद्या से विनय, विनय से योग्यता और धर्म, धर्म से सब सुख प्राप्त होते हैं। इसीलिए वैदिक संस्कृति में कहा गया है कि -

*''विद्या ददाति विनयं,*
*विनयाद्याति पात्रताम्।*
*पात्रत्वाद् धनमाप्नोति,*
*धनाद् धर्मस्ततः सुखम्॥''*

विद्या और सुख एक साथ प्राप्त नहीं हो सकते। सुख चाहने वाले को विद्या और विद्या चाहने वाले को सुख त्याग देना चाहिए। अच्छी शिक्षा कहीं भी हो, उसे हासिल करना चाहिए।

*उत्तम विद्या लीजिए,*
*यद्यपि नीच पै होय।*
*परयौ अपावन ठौर में*
*कंचन तजत न कोय॥*

शिक्षा व्यक्ति को ज्ञान के प्रकाश से शुभाशुभ, भले-बुरे की पहचान करा, आत्म विकास की प्रेरणा देती है। उन्नति का प्रथम सोपान शिक्षा है, उसके अभाव में हम लोकतंत्र और भारतीय संस्कृति की रक्षा नहीं कर सकते हैं। शिक्षा व्यक्ति को ज्ञानवान बनाती है। इस ज्ञान से उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। वह ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों में महारत हासिल करता है, जो उसके भावी जीवन को सुख-शांति और धन-संपति से भर देता है। शिक्षा वास्तविक अर्थों में मनुष्य को जीवन जीना सिखाती है। आज अच्छी शिक्षा के मायने बदल गए हैं। पुराने जमाने की शिक्षा में चरित्र निर्माण पर जोर था। इसलिए अधिकतर धार्मिक शिक्षा दी जाती थी। आज शिक्षा का उद्देश्य मौलिक रूप से कॅरियर का निर्माण है। वर्तमान समय की शिक्षा व्यक्ति को धनलोलुप बना रही है।

शिक्षा मानव जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उसका प्रत्यक्ष आत्मविश्वास और आत्मा पर सकारात्मक असर पड़ता है। हालांकि शिक्षा और जीवन की संतुष्टि के मध्य लिंक पर अनुभवजन्य साक्ष्य नहीं है। शिक्षा के क्षेत्र में खुशी परामर्श का प्रावधान बहुत जरूरी है। अभी तक आर्थिक विकास की दर पर बढ़ाना ही मुख्य उद्देश्य रहा है। बढ़ती आर्थिक समृद्धि और व्यक्तिगत खुशी और सामाजिक भलाई के बीच रिश्ता है कि विकसित देशों में प्रतीत होती है। यही वजह है कि इन देशों में पिछले 50 वर्षों में अवसाद बढ़ा है।

ऐसी स्थिति में शिक्षकों के लिए बड़ी चुनौती है। खुशी और शिक्षा का एक अन्योन्याश्रित संबंध है। यह सही है कि खुशी शिक्षा का उद्देश्य होना चाहिए और एक अच्छी शिक्षा व्यक्तिगत और सामूहिक खुशी के लिए काफी सहायक होती है। अफसोस की बात है, कि अधिक स्कूली शिक्षा और औपचारिक शिक्षा तेजी से अंत की ओर बढ़ रही है।

हर माता-पिता अपने बच्चे को सदा खुश देखना चाहता है और आमतौर पर यही जवाब देते हैं। शायद इसीलिए खुशी को भी शिक्षा के एक उद्देश्य के रूप में उल्लेख किया गया है। यदि हम शिक्षा का उद्देश्य खुशी ले रहे थे तो देखना है कि हम बच्चे को क्या सिखा सकते हैं। दूसरा हम कैसी मदद कर सकते हैं। बच्चे की समझ के लिए क्या खुशी है। क्या वास्तव में खुश होने के लिए हम दुख और दूसरों की पीड़ा को कम करने के लिए एक क्षमता विकसित कर सकते हैं।❑

(स्वतंत्र लेखक)

# एकात्म मानव दर्शन बने, प्रसन्नता का आधार

❑ विष्णुप्रसाद चतुर्वेदी

**विकास के नाम पर हमने भी प्रकृति के दोहन का मार्ग अपना लिया। वैज्ञानिकता के नाम पर पन्थ ( रिलिजन ) निरपेक्षता को धर्म निरपेक्षता मान लिया गया है। धर्म को शिक्षा से अलग करना ही हमारी सबसे बड़ी नासमझी रही है। जब शिक्षा सरकारी नियन्त्रण में नहीं थी तब वह धर्म आधारित थी। उस समय शिक्षा के माध्यम से प्रकृति संरक्षण के संस्कार विकसित करने के साथ ही प्रसन्न रहना भी सिखाया जाता था। अंग्रेजों ने शिक्षा पर सरकारी नियंत्रण कर स्थिति को बदल दिया। दुर्भाग्य यह रहा कि देश के स्वतन्त्र होने के बाद भी हम अपनी शिक्षा को नहीं बदल पाये। विश्व में सर्वे भवन्तु सुखिनः का सर्वप्रथम उद्घोष करने वाले भारत द्वारा ऐसी जीवनशैली विकसित की गई थी कि प्रसन्नता के लिए अलग से उपाय करने की आवश्यकता ही नहीं रहे।**

प्रसन्न रहना ही मानव जीवन का प्रमुख ध्येय है। इस ध्येय की ओर सरकारों का ध्यान आकर्षित करने के लिए संयुक्त राष्ट्रसंघ ने 20 मार्च को विश्व प्रसन्नता-दिवस घोषित किया है। संयुक्त राष्ट्रसंघ चाहता है कि सरकारें इस बात का ध्यान रखें कि देश के विकास का लाभ देश के सभी लोगों को मिले। गरीबी समाप्त करने के लिए दीर्घस्थायी (सस्टेनेबल) विकास का मार्ग अपनाया जाय पर्यावरण विनाश का नहीं। प्रसन्नता कोई भौतिक राशि नहीं है जिसे उपकरणों से मापा जा सके। संयुक्त राष्ट्रसंघ ने विकास के कुछ लक्ष्य निर्धारित कर उनके आधार पर खुशी को मापने का प्रयास किया है।

यह खुशी की बात है कि प्रसन्नता-दिवस की पहल हमारे पड़ौसी राष्ट्र भूटान से हुई है। भूटान के नागरिकों को विश्व के सर्वाधिक प्रसन्न नागरिक माना जाता है। संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा प्रकाशित प्रसन्न देशों की सूची में भारत क्रमांक 118 पर है। संयुक्त राष्ट्रसंघ का मानना है कि मानव मात्र के जीवन को अच्छा करने के लिए आर्थिक, सामाजिक तथा पर्यावरणीय विकास के लक्ष्यों को एकात्मकता के साथ प्राप्त किया जाना आवश्यक है। संयुक्त राष्ट्रसंघ ने मानव अधिकार व उत्तरदायित्व के आधार पर 17 लक्ष्य तय किये हैं। सदस्य राष्ट्रों को 2030 तक वांछित स्तर प्राप्त करना है। इन लक्ष्यों में गरीबी हटाने, लिंग समानता स्थापित करने, सभी को सम्मानजनक रोजगार प्रदान करने, आर्थिक असमानता में कमी करने, वैश्विक सहयोग के साथ पर्यावरणीय स्थायित्व, शान्त व सहनशील समाज के विकास पर जोर दिया गया है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य राष्ट्र इन लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु प्रयास करने लगे हैं। संयुक्त राज्य अमीरात ने तो अलग से प्रसन्नता-मंत्रालय स्थापित कर दिया है। भारत में मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह ने, लोगों को खुश रहना सिखाने हेतु, खुशी-मंत्रालय स्थापित करने की घोषणा की है।

मानव विकास के इतिहास को देखें तो स्पष्ट होगा कि खुश रहना मानव की आन्तरिक इच्छा रही है। जंगल के जीवन से लेकर सभ्य समाज तक यह चाह निरन्तर बनी रही है। प्रत्येक काल व प्रत्येक समाज के चिन्तकों ने लोगों के प्रसन्न रहने की शिक्षा देने का प्रयास किया है। इन्हीं प्रयासों से सभ्यता व संस्कृति का जन्म हुआ है। हजारों वर्षों के निरन्तर प्रयास के बाद भी खुश रहने का कोई सर्वमान्य सूत्र अभी तक विकसित नहीं हो पाया है। संयुक्त राष्ट्रसंघ के प्रयास को भी उसी निरन्तरता में देखा जाना चाहिए।

भारत विश्व के प्राचीनतम राष्ट्रों में से एक है। भारत के ऋषियों ने चिन्तन कर अति प्राचीनकाल में ही यह जान लिया था कि भौतिकता से स्थाई प्रसन्नता नहीं पाई जा सकती और उनका संपूर्ण चिन्तन आध्यात्मिकता की ओर मुड़ गया। विविधतापूर्ण वह चिन्तन वेद, उपनिषद, पुराण, धर्मग्रन्थ, महाकाव्य आदि के रूप में संकलित हुआ। इनमें एकात्मवाद सर्वाधिक वैज्ञानिक है। इसमें सम्पूर्ण सृष्टि को एक इकाई या ईश्वर माना गया है। सृष्टि में जो कुछ भी है वह उस एक का ही अंश है। इसी से अध्यात्म की स्थापना हुई।

भौतिक विज्ञान की प्रगति ने ऐसी चकाचौंध पैदा की जिससे लगने लगा कि मानव प्रकृति को जीत लेगा और चारों ओर सुख ही सुख रहेगा। आज लग रहा है कि प्रकृति को जीतने का प्रयास गलत है। इससे तो पर्यावरण परिवर्तन दैत्य पैदा हो गया है। इसे नियंत्रित करने का मार्ग आध्यात्मिकता से होकर ही जाता है। इसी से प्रभावित होकर संयुक्त राष्ट्रसंघ समन्वित विकास पर जोर दे रहा है। यह परम्परागत भारतीय सोच के अनुरूप है।

**भारतीय संस्कृति में प्रसन्नता के सूत्र**

भारतीय संस्कृति की निरन्तरता का कारण प्रकृति के साथ मिलकर चलना रहा है। हर जीव व पदार्थ के धर्म को समझकर उसी के अनुसार आचरण करने की सीख गीता व अन्य ग्रन्थों के माध्यम से दी गई है। हर ऋषि का प्रयास विश्व कल्याण का मार्ग बतलाने का रहा है। स्वामी विवेकानंद व स्वामी रामदास की लोकप्रियता का राज भी यह कि उन्हें सुनकर लोगों को प्रसन्नता का अनुभव होता है।

लम्बे समय तक विदेशी शासन और विदेशी शिक्षा के कारण हमारी परम्परागत सोच कमजोर हो गई। विकास के नाम पर हमने भी प्रकृति के दोहन का मार्ग अपना लिया। वैज्ञानिकता के नाम पर पन्थ (रिलिजन) निरपेक्षता को धर्म निरपेक्षता मान लिया गया है। धर्म को शिक्षा से अलग करना ही हमारी सबसे बड़ी नासमझी रही है।

जब शिक्षा सरकारी नियन्त्रण में नहीं थी तब वह धर्म आधारित थी। उस समय शिक्षा के माध्यम से प्रकृति संरक्षण के संस्कार विकसित करने के साथ ही प्रसन्न रहना भी सिखाया जाता था। अंग्रेजों ने शिक्षा पर सरकारी नियंत्रण कर स्थिति को बदल दिया। दुर्भाग्य यह रहा कि देश के स्वतन्त्र होने के बाद भी हम अपनी शिक्षा को नहीं बदल पाये। विश्व में सर्वे भवन्तु सुखिनः का सर्वप्रथम उद्घोष करने वाले भारत द्वारा ऐसी जीवनशैली विकसित की गई थी कि प्रसन्नता के लिए अलग से उपाय करने की आवश्यकता ही नहीं रहे।

विविधता भरे इस संसार में प्रसन्नता प्राप्त करने का कोई भी एक उपाय सबके लिए कारगर नहीं हो सकता। किसी को सुबह टहलने से प्रसन्नता मिलती है तो कोई पूजा-पाठ करके प्रसन्न होता है। किसी को हनुमान जी के दर्शन कर प्रसन्नता होती है तो कोई कृष्ण का दीवाना है। कोई मूर्ति की पूजा में विश्वास नहीं करता तो कोई सिनेमा कलाकारों की मूर्तियाँ पूज कर प्रसन्न है। भारत के सनातन धर्म में सभी के लिए स्थान है जब तक कि वे दूसरे को पीड़ा नहीं दे।

**एकात्म मानव दर्शन**

जापान में बोलते हुए स्वामी रामतीर्थ ने कहा था कि प्रसन्नता सफलता का महत्त्वपूर्ण सूत्र है। प्रसन्न रहना है तो परिश्रम का फल पाने की चिन्ता मत करो। भविष्य की चिंता मत करो। न ही सफलता की सोचो और न ही असफलता की सोचो। काम के लिए काम करो। कार्य स्वयं अपना पारितोषिक है। भूतकाल के विषय में सोच कर मन दुःखी नहीं करो तो भविष्य की चिन्ता भी मत करो। प्रत्यक्ष वर्तमान में कार्य करो। ऐसा होने पर तुम हर हाल में प्रसन्न रहोगे, गीता में इसे स्थितिप्रज्ञता कहा है। प्रसन्न रहने का कोई भी मंत्र स्थितिप्रज्ञता से अधिक कारगर नहीं हो सकता।

भारतीय जनता पार्टी के प्रथम अध्यक्ष पण्डित दीनदयाल उपाध्याय का कहना है कि प्रजातन्त्र में हर व्यक्ति को सम्मान से जीने का हक है। एकात्म मानव दर्शन हर व्यक्ति को यह हक देने का मार्ग है। एकात्म मानव दर्शन, पूँजीवाद,वामपंथ व समाजवाद से भिन्न मार्ग है। यह भारतीय जीवनमूल्यों पर आधारित विचार है। एकात्म मानव दर्शन में व्यक्ति व समाज के परस्पर सहयोग से समाज को चलाने की बात है। वर्तमान सरकार के सामने चुनौती है कि संयुक्त राष्ट्रसंघ द्वारा निर्धारित लक्ष्य को 2030 तक प्राप्त करने हेतु वह एकात्म मानव दर्शन को व्यवहार लाए। सरकार को इसकी समयबद्ध कार्य योजना बना कर उसे क्रियान्वित करना चाहिए। ❑

(बाल एवं विज्ञान विषयक लेखक)

In Nyaya Sutra, Maharishi Gautama speaks at length about knowledge. Knowledge worth the name must have the property of affecting the knower, or affectivity. Affectivity should imply refinement through knowing, being (unpurified) to becoming (purified or refined). It is through this refinement, a process of purification that one becomes Sanskrita, Cultured, and from this, the concept of Sanskriti comes into existence. Education here, should be the process of refining the knower, and making him a cultured. From this point, enlightenment, or Moksha should be a straight road.

# Education that leads to Happiness – Contentment

❑ Dr. TS Girishkumar

Undoubtedly, happiness is a state of mind that everyone must be looking for. When we seriously think of what happiness is, we shall start getting into difficulties and confusions, and at times contradictions. Quite interestingly, when one seriously introspects into oneself, the first person also can get into difficulties, as to what is happiness, or what aspects can make him happy in the real sense. Most often we shall come across people who shall not be able to give a definite answer, towards a question, what is happiness to him or what can make him happy. In fact, if one makes a person speak aloud of it, it is easy to see one frequently changing opinions or shifting positions. All these point out to just one thing; it is difficult to define what happiness is.

**Happiness in Bharatiya knowledge tradition**

It is a matter of pride, and at the same time it becomes easy and straight forward to talk about anything in Bharatiya knowledge tradition. This is so because we just have only one knowledge tradition, which is the Vedopanishadic knowledge tradition. To my mind, there is nothing in the realm known as knowledge that is not enquired into and discussed in detail in the Vedopanishadic knowledge tradition. This indeed makes our task outrightly straight, without confusions, and so to say easy, provided, the said knowledge tradition is made available to us.

The branches or offshoots from the Vedopanishadic knowledge tradition evolved as distinct identities but without sacrificing or destroying the roots. Thus we have many traditions evolved, from Materialism like that of Maharishi Charvaka to Advaita Vedanta of Sankaracharya. Buddhism is such an offshoot, it is undisputed that the coming of Buddha was to refine Vedic society at a time a reformer was in need. For the Buddhist school of

philosophy, happiness is absence of attachment. Jaina school would say the same, and 'Aparigraha'. Buddhism builds their entire system on this edifice of practicing detachment; hence discussion on Buddhism.

Most Buddhist theories are propounded by the followers of Buddha subsequently and not directly by Buddha. To the best of my knowldge, Buddha gave only three theories directly, one the theory of 'Catur Arya Satya' two, the theory of 'AshtangaMarga' and three, the theory of 'PradityaSamutpada'. Catur arya Satya is known as the four noble truths, Ashtangamarga is known as the Eight fold path and PradityaSamutpada is known as the theory of dependent origination. Other things are experiments done by Buddhist Acharyas through the more than thousand years of existence of Buddhism in Bharat where all Universities used to be of Buddhist Professors. The whole situation is only changed after more than one thousand years with the coming of Adi Sankaracharya.

Buddha directly gave the theory of non-attachment or detachment. He said that the cause of Dukha, or unhappiness is due to attachment with anything. One is attached to this and that, then suffers from agony and anguish of what may happen to things one is attached to, one experiences fear and trembling of losing what one is attached to and so on and so forth. Hence Buddha prescribed the method (eight fold path)) to practise detachment.

With Buddha, some idea evolves as to what is happiness, especially pure happiness. There is a difference between pure happiness or intrinsic happiness and impure happiness or instrumental happiness. Intrinsic happiness is happiness in itself, or unconditional happiness. Here happiness is not conditioned by anything else, it is a state of mind which shall be so, irrespective of anything, or any changes. Instrumental happiness is happiness upon some conditions, and when those conditions cease to be, happiness also shall cease to be. In other words, instrumental happiness is dependent on something else other than the state of happiness. Obviously, true happiness is intrinsic happiness only. This has the ontological status of permanence. In the entire Bharatiya knowledge tradition, we find happiness as intrinsic happiness and that becomes the desideratum in every system of philosophy.

**The one and only goal, desideratum, in Bharatiya knowledge tradition.**

There is only just one final, end goal, objective, desideratum for all and anything done or being done in Bharatiya knowledge tradition and that is liberation, or 'Moksha'. The end goal in all human activities is undoubtedly Moksha for us. The final goal in the Purusharthas is Moksha, the final goal in Bhakti is Moksha, the final goal in Yoga is Moksha, the final goal in jnana is moksha and the final goal in education is also Moksha, as said, 'Sa Vidya Ya Vimuktaye'. Thus transcendence becomes the final goal for any Bharatiya, in anything he or she does.

However, these are all transcendental questions and ultimate objectives of human existence. But it has to be a journey, perhaps a long journey through various existential situations of life to reach this ultimate goal or objective. We are sure of the ultimate goal and objective and transcendence etc., but we also have to discuss about the pathway through which we do have to travel. Bharatiya knowledge tradition does not teach you that life is something like a 'Jihad', you sacrifice everything here, and you will be rewarded with everything in heaven. There are no promises of rewards after death, and no threat of punishments in Bharatiya knowledge tradition.

The goal of ultimate Moksha is set for all as one and the same, but how to reach there and in which manner has to be selected by individuals. They have many prescribed paths, and if pos-

sible, one can create his own pathway as well. So the goal is known and set. Now it is not the case that one has to forget everything else and sacrifice everything else to reach that set goal, quite on the contrary, one has to live through, strive through a common life with common attitude to reach there. Great personalities are indeed exceptions; but for common folks, it shall be just common, mundane living, and mundane everything. The Purusharthas give us ample instructions to this. One need not look for Moksha, one only has to lead a life as directed by Dharma. One need not believe in anything, need not perform any rituals, but just live according to Dharma and Moksha shall be automatic.

One need not be conscious of Moksha, and work towards it, but just go one living the most common life, but according to Dharma. Dharma has various connotations, there can be different Dharmas according to different ways in which one lives, for instance, a teacher simply will have to follow Acharya Dharma and so on. In whichever state one may find oneself in, there is a pertaining Dharma, and one just has to live up to that as well as in accordance.

**Happiness and mundane living**

The Vedopanishadic knowledge tradition does not deny mundane life. In each state of mundane existence, one has to be that. Remember the four Ashramas in human existence? From Brahmacarya to Gruhasta to Vanaprastha and Sanyas. In each stage the life has to be full and complete. This makes us think towards happiness in mundane life seriously. In transcendental life happiness is bliss, the unruffled state of happiness arising from being one with the ultimate reality. And to reach there, through the long path, one has to keep remaining happy and going happy from step to step, stage to stage. This precisely shall be kind of happiness what we should be discussing now. Bhagavad Gita itself is an excellent instruction of mundane living, and nowhere it is said that mundane life is meaningless 'during' mundane existence. There are some confusion here, at times scholars are found supporting negation of common existence and prescribing such negation for all. This never had been the case at all. There had been no suggestions towards promises of rewards after death and threat of punishments for not negating mundane life in Bharat. Those used to be Semitic theology and a subsequent Victorian morality.

Hence the questions shall be of common happiness of and for common people in common existence. What shall be their happiness? We are well aware that happiness for us shall be outcome from small and many times otherwise insignificant aspects of living. The real practical happiness shall be from such simple and small things, and such happiness shall go on into making of an attitude of happiness. It may be of giving, taking and eventually meaningfully coexisting with one another. Again, this shall amount to the Bharatiya epistemology of coexistence of the many, giving all due to the multiplicity and plurality of nature.

**Education leading to happiness**

We already know expressions such as 'Sa Vidya Ya Vimuktaye' (Education liberates), 'Vidya Amrutamashnutaye' (Education makes one immortal) etc. these expressions directly belong to the Vedopanishadic knowledge tradition. Education is also understood as a process of transcending from darkness (here, ignorance) to light (here wisdom) as 'Tamasomar JyotirGamaya'. The concpt of light is very important to Bharatiyas. Rg Veda, while speaking about Aryans, say that 'Praja Arya Jyotiragra:' Arya is the one who is led by 'light' and who searches 'light'. Light here is wisdom, enlightenment, and ultimately Moksha. Hence Education could be leading to wisdom and enlightenment.

In Nyaya Sutra, Maharishi Gautama speaks at length about knowledge. Knowledge worth the name must have the property of affecting the knower, or affectivity. Affectivity should imply refinement through knowing, being (unpurified) to becoming (purified or refined). It is through this refinement, a process of purification that one becomes Sanskrita, Cultured, and from this, the concept of Sanskriti comes into existence. Education here, should be the process of refining the knower, and making him acultured. From this point, enlightenment, or Moksha should be a straight road.

This way, it should be natural for education to provide happiness to the knower. Sanskriti, or refinement implies many things. Education provides all these, and one is knowledgeable enough to understand and know of things around, mundane or otherwise, and remain 'unaffected'. Should small 'puckers' around don't affect, not even disturb, then that should be a state of ideal happiness in mundane existence of common man. Education in the real sense of the term should be doing this. ❑

(Professor of Philosophy, The Maharaja Sayajirao University of Baroda)

**The aim and objective of our education system should be to have faith in ourselves i.e. our Purushartha or capacity of doing things on our own. Concentration is main factor to contribute for success, which comes by Yoga/ Dhyan thus happiness comes from these basics. The main objective should be not to allow any good reason to generate slightest sign of distress. The present scenario should be analysed carefully, considering Growth in formal education, Development of awareness, GDP, More and more core families than joint families etc but without any sign of happiness.**

# Education and Happiness

❑ **Dr. A. K. Gupta**

Sarve Bhawantu Sukhin... is the basic need one should aim at. Happiness if it is meant by Bliss then it bears all together different meaning. Smile of a child shows it all. At the end of the day if one feels happy then there is nothing to compare. Everyone looks for happiness may he or she be from any profession or any age group. We at Bharat look for happiness of all, leave aside happiness of just one or few.

In general we talk about GDP as a measure of happiness as it is assumed to show quality of life. We also know how that is calculated Gross Domestic Product considering all products or services which bring everything which contributes to National Products in terms of money added. However there are many things which are not covered under it.

It was only in 1972 when Fourth King of Bhutan H.E. Jigme Singhye Wangchuk who coined the idea of GNH i.e. Gross National Happiness based on different approach it considers many things which otherwise are not taken care of. As stated earlier it should cover all the things related to Happiness namely as four pillars known as:-

(i) Sustainable Socio-Economic Development
(ii) Preservation and Promotion of Culture
(iii) Good Governance
(iv) Environmental /conservation

Further nine domains are given to elaborate these four pillars known as:-

(i) Living Standards
(ii) Education
(iii) Health
(iv) Environment
(v) Community Vitality
(vi) Time Use
(vii) Psychological Well Being
(viii) Good Governance
(ix) Cultural Resilience and Promotion

For a small country like Bhutan it is very difficult to compete with larger and developed country without thinking of happiness of their people which is based on preservation of their cultural values, environmental ambience etc.

The same is reflected for us here in Bharat. We prefer to follow the same pattern as can be referred in speeches of Ms Indumati Katdhare. Shri Ram Madhav also talks about sustainable consumption which leads to Sustain-

able Development.

Therefore our education system should be such that it goes for GNH rather than GDP. Needless to say that a person getting attention by his/her son/daughter in the old age feels much better than anything which contributes to GDP. It is therefore GNH which is more important than GDP in our context.

Prof J. N. Reddy, a Mechanical Engineer- well known for his work in the field of Finite Element Analysis - from US, once talked about the stress which is considered to be a major reason for distress generated and later seen in human body. This was based on his research work at South East Asia on human cell using Finite Element Analysis (Ref. His talk at Manipal Institute of Technology in the year 2007 during RDSE 2007).

Thus anything which creates pressure on our physical structure may be considered to generate stress in physiological system that is where GNH is preferred than GDP for obvious reasons. We know that there are many things beyond our control, it is better to leave them to decide their course on their own. One should not forget about first Sukha i.e. Nirogi Kaya. Failure may lead us to rethink about reasons for our failures thus converting thinking into worries which becomes later as a reason for our permanent source of worry.

The aim and objective of our education system should be to have faith in ourselves i.e. our Purushartha or capacity of doing things on our own. Concentration is main factor to contribute for success, which comes by Yoga/Dhyan thus happiness comes from these basics. The main objective should be not to allow any good reason to generate slightest sign of distress.

The present scenario should be analysed carefully, considering growth in formal education, development of awareness, GDP, More and more core families than joint families etc but without any sign of happiness. Not considering environmental issues around us, our cultural values etc. That is where we lack in GNH, which is the basic factor to target.

The need of the hour is to focus on character building in our present education system by putting more efforts on certain issues e.g. moral values, physical fitness, attitude to help others specially the needy ones, to think and work for environmental friendly approach, To preserve our cultural heritage etc. It is basically sustainable consumption i.e. To recycle, reuse and not to leave anything waste or what we can call as Joothan.

Thus Annapurna is the name given to a woman who is always prepared to serve as many as it comes to the situation without a sign of worry of her face. We may rethink about our old sayings preserving and making our cultural values more stronger, worrying about everyone in the Universe right from birds to dogs to cows or even any one unknown.

All this thought of diligently i.e. planned and executed meticulously can bring us many positive and welcome changes. I think NITI Aayog can do this by focusing on our traditional values or model thus making suitable changes in various walks of our life. The basic starting point may be MHRD through making suitable changes in present day education system.

While planning one should also think about the time frame of the expected outcome in both qualitative and quantitative manners. Thus implementation of any proposed scheme should address different age groups to bring about the changes. More attention is required for newly entrants in the system, because it is easier to mould them at tender age.

If we think at global level then we have to implement at that level. Only then we can target at working at Global level. The main concern remains about eradication of society from corruption. Everyone should be made a strong personality to face the challenges. The will has to come from ruling political parties and while thinking about the last person in the queue i.e. Antyodaya. ❑

(Professor, Structural Engineering Department, JNV University, Jodhpur)

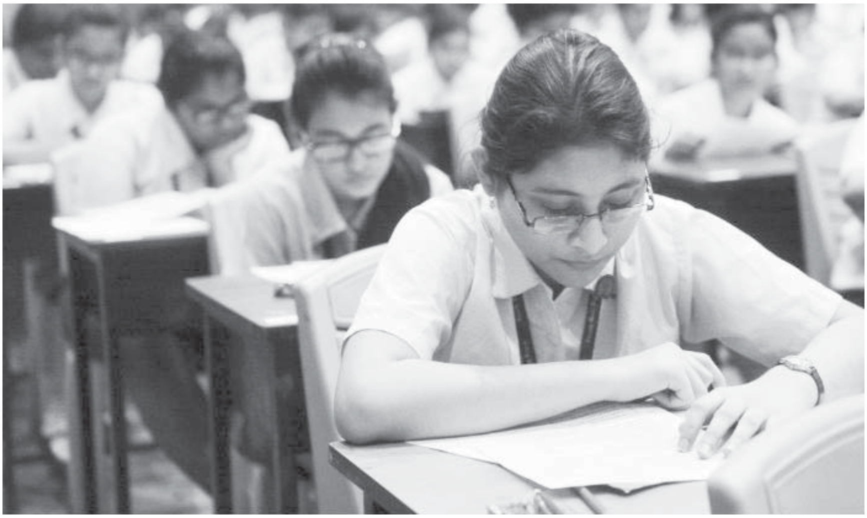

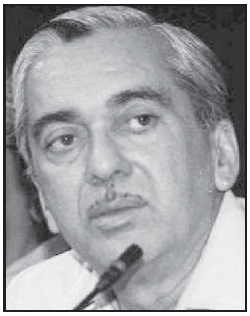

**प्रतिभा विकास के लिए वातानुकूलित स्कूल और बसों की आवश्यकता नहीं होती, उसके लिए पसीना बहाने की क्षमता को पहले विकसित करना होता है। समाज के हर तबके को जानने, समझने और उससे संवेदनात्मक स्तर पर जुड़ने की आवश्यकता भी चाहिए। एक अच्छे स्तर पर केंद्रीय विद्यालय और नवोदय विद्यालय इसकी पुष्टि करते हैं। इस समय देश को इस से अधिक सुविधा-संपन्न विद्यालयों की कोई आवश्यकता नहीं है। चुनौती तो यह है कि हर सरकारी स्कूल को इस स्तर तक लाया जाए। अगर इस प्रकार के स्कूल स्थापित हों और लगातार इनकी संख्या बढ़ती रहे तो अनेक दृष्टिकोण परिवर्तन संभव हो सकेंगे। माता-पिता मेडिकल, इंजीनियरिंग, सिविल सर्विस के अलावा अन्य विकल्प भी तलाशेंगे।**

# अंकों की दौड़ में प्रतिभा का अवमूल्यन

**❑ जगमोहन सिंह राजपूत**

हर साल की तरह इस बार भी बोर्ड परीक्षाओं के परिणाम घोषित और चर्चित हुए। एक तरफ ऊँचे और अच्छे अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थी और उनके परिवार सफलता का समारोहपूर्वक आनंद लेते हैं, तो दूसरी तरफ अधिकतर विद्यार्थी जो उम्मीद के अनुरूप अंक और श्रेणी प्राप्त नहीं कर पाते, अनेक बार हताशा की स्थिति में पहुँच जाते हैं। अवसाद की यह अवस्था उन्हें अनेक वर्षों तक घेरे रह सकती है और आत्महत्या तक के प्रकरण इसी का परिणाम होते हैं।

इधर एक अन्य आश्चर्यजनक स्थिति यह आई है कि अवसाद की अवस्था में पहुँचने वालों में वे विद्यार्थी भी शामिल हैं, जिन्होंने परीक्षा में प्रथम श्रेणी और उसमें भी काफी ऊपर अंक प्राप्त किए होते हैं, मगर जानते हैं कि अब इन अंकों में भी उन्हें उच्च शिक्षा में अपने मनचाहे पाठ्यक्रम या संस्था में प्रवेश दिलाने का दम नहीं बचा है। आज से पचास साल पहले प्रथम श्रेणी प्राप्त करना अपने आप में बहुत बड़ी उपलब्धि मानी जाती थी, मगर आज उपलब्धि तब मानी जाती है जब बच्चे के अंक अट्ठानवें-निन्यानवें प्रतिशत से अधिक हों! ऐसी स्थिति में भी यह नहीं कहा जा सकता कि ऐसे विद्यार्थी को वह महाविद्यालय या विश्वविद्यालय मिल ही जाएगा, जिसमें वह प्रवेश चाहता है!

इधर अधिक अंक प्राप्त करने वालों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है और इससे अनेक प्रकार की समस्याएँ पैदा हो रही हैं, जिनमें सबसे प्रमुख उच्च और व्यावसायिक शिक्षा में प्रवेश प्राप्त करने को लेकर पैदा हो रही हैं। बड़ा प्रश्न यह है कि इसके समाधान के लिए क्या किया जा सकता है? सबसे पहले सीबीएसई को लेकर चर्चा करना तर्कसंगत होगा, क्योंकि इसी बोर्ड से देश के सारे अन्य बोर्ड दिशा-निर्देश और प्रेरणा लेते हैं। इसकी अपनी साख बची हुई है और इसके स्तर को सारे देश में सराहा जाता है। यह अपेक्षा की जाती है कि शिक्षा के क्षेत्र में जो कुछ राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर नया होगा, उपयोगी होगा, सीबीएसई उसका अध्ययन करेगा और अपने पाठ्यक्रम में उचित परिवर्तन करेगा तथा अन्य बोर्डों के सामने उसे विचार के लिए प्रस्तुत करेगा। अपेक्षा तो यही है कि एनसीईआरटी जैसी संस्थाओं से संपर्क स्थापित कर सीबीएसई शैक्षिक समस्याओं का समाधान निकालने के लिए नवाचार, शोध और सर्वेक्षण करेगा तथा अन्य को करने को प्रेरित करेगा। 2004 के बाद यह संस्था नौकरशाही के आधिपत्य में ही चली है और इसके अपने मूल और मुख्य उद्देश्य इसी के सामने धुँधले हो गए हैं।

इधर इस संस्था को राष्ट्रीय स्तर पर अनेक प्रकार की प्रवेश और योग्यता परीक्षाएँ लेने का

उत्तरदायित्व सौंपा गया है। स्पष्ट है कि इसका ध्यान इन्हीं पर अधिक केंद्रित होकर रह गया है, जिससे उसके निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति में बाधा पड़ी है। इसकी अपनी परीक्षा को लेकर इस पर 2004 के बाद मंत्रालय से लगातार दबाव डाला गया कि बच्चों पर 'बस्ते का बोझ' कम किया जाए, परीक्षा के महीनों पहले से जो तनाव बच्चों पर आ जाता है उसे भी कम किया जाए। इस सब पर शैक्षिक और शोध आधारित फैसले करने के स्थान पर सीबीएसई ने सबसे अधिक अपेक्षित परिणाम देने वाला रास्ता चुना- उसने ऐसे प्रश्नपत्र तैयार कराए, जिन्हें बिना तनाव के हल किया जा सके! उसी निर्णय का परिणाम है कि बोर्ड परीक्षा में अब नब्बे प्रतिशत से ऊपर अंकों की चमक फीकी पड़ गई है। इसके अनेक प्रकार के अस्वीकार्य प्रभाव पड़ रहे हैं। ट्यूशन पर जोर बढ़ा है और कोचिंग संस्थान चाँदी काट रहे हैं, जिनमें गए बच्चे लगातार आत्महत्याएँ करने को मजबूर हो रहे हैं।

परीक्षा परिणामों के बाद मीडिया आनन-फानन में 'टापर्स' के घर पहुँचता है। केवल अंकों को ही संपूर्ण शिक्षा मान कर वह यह पूरी तरह भुला देता है कि प्रथम स्थान पाने वाला ही सर्वश्रेष्ठ विकसित व्यक्तित्व का उदाहरण भी हो ऐसा आवश्यक नहीं है। सीबीएसई इस दिशा में कार्य कर सकता है कि श्रेष्ठता का आधार केवल अंक नहीं होंगे, व्यक्तित्व विकास के अन्य आयाम भी इसमें योगदान करेंगे और हो सकता है केवल सत्तर-पचहत्तर प्रतिशत अंक पाने वाला सर्वश्रेष्ठ व्यक्तित्व का धनी हो, मगर अपनी रुचि के क्षेत्र जैसे संगीत, खेल, साहित्य में अपनी श्रेष्ठता स्थापित कर चुका हो, जिसका आचार, विचार, व्यवहार सर्वप्रिय रहा हो! उसे ही टॉपर क्यों न घोषित किया जाए!

ऐसा करने के लिए ठोस अकादमिक और शैक्षिक आधार के साथ-साथ पूर्ण व्यक्तित्व विकास के अनेक आयामों को भी निर्मित कर महत्त्व देना होगा। वैसे उन बच्चों

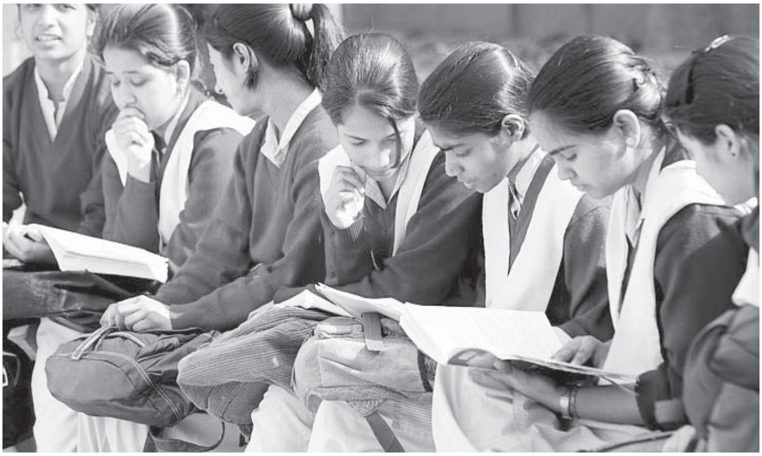

को आवश्यक सुविधाएँ देने का प्रावधान प्रारंभ से ही होना चाहिए, जिनकी विशेष रुचि खेलों में, संगीत, साहित्य, कलाओं और हस्त कौशल में पहचानी जा चुकी हो। देश को हर क्षेत्र में प्रतिभाशाली युवाओं की आवश्यकता है और ऐसी प्रतिभाओं के विकास को हतोत्साहित करने वाली अधिक अंकों की दौड़ से बचाना ही होगा। इसके लिए देश में संगीत स्कूल, भौतिकी स्कूल, कविता स्कूल, कला स्कूल, और ऐसे ही विषयों के नवोदय विद्यालय की संरचना के आधार पर विशेष स्कूल खोल कर प्रतिभावान बच्चों को वहाँ लाकर उनका पूरा भार उठाना चाहिए।

यहाँ बच्चे स्कूल बोर्ड का सारा पाठ्यक्रम वैसे ही पढ़ेंगे जैसे अन्य स्कूलों में पढ़ाया जाता है। इसके साथ-साथ वे अपनी रुचि विशेष के क्षेत्र में अलग से प्रवीणता हासिल करने की सब सुविधाएँ भी प्राप्त कर सकेंगे। अगर देश में पाँच वर्ष तक प्रतिवर्ष ऐसे सौ स्कूल खोले जाएँ तो इसके दूरगामी सार्थक परिणाम कुछ ही वर्षों में सबके सामने होंगे। इन चयनित बच्चों को नवाचार करने, प्रयोग करने, मूर्धन्य विद्वानों से संपर्क करने के अवसर आसानी से प्रदान किए जा सकते हैं। इनकी जिज्ञासु प्रवृत्ति को पँख मिलेंगे और इनकी सृजनात्मकता अंकों के बोझ तले दब कर पंगु नहीं होगी।

प्रतिभा विकास के लिए वातानुकूलित स्कूल और बसों की आवश्यकता नहीं होती, उसके लिए पसीना बहाने की क्षमता को पहले विकसित करना होता है। समाज के हर तबके को जानने, समझने और उससे संवेदनात्मक स्तर पर जुड़ने की आवश्यकता भी चाहिए। एक अच्छे स्तर पर केंद्रीय विद्यालय और नवोदय विद्यालय इसकी पुष्टि करते हैं। इस समय देश को इस से अधिक सुविधा-संपन्न विद्यालयों की कोई आवश्यकता नहीं है। चुनौती तो यह है कि हर सरकारी स्कूल को इस स्तर तक लाया जाए।

अगर इस प्रकार के स्कूल स्थापित हों और लगातार इनकी संख्या बढ़ती रहे तो अनेक दृष्टिकोण परिवर्तन संभव हो सकेंगे। माता-पिता मेडिकल, इंजीनियरिंग, सिविल सर्विस के अलावा अन्य विकल्प भी तलाशेंगे। वे अपनी महत्त्वाकांक्षा बच्चों पर लादने पर कई बार सोचेंगे। ट्यूशन का बढ़ता खेल कमजोर पड़ेगा। बच्चों को भयभीत करने वाले कोचिंग उद्योग की रफ्तार धीमी तो पड़ ही जाएगी। प्राइवेट स्कूलों में प्रवेश की जो मारामारी बढ़ रही है उससे भी लोगों को विरक्ति होगी। सरकारी स्कूलों के अध्यापक इन स्कूलों में प्रवेश के लिए विद्यार्थियों को तैयार करने में रुचि लेंगे और उन्हें इसमें सफलता के लिए पुरष्कृत भी किया जा सकता है। ऐसी किसी भी परियोजना निर्माण और क्रियान्वयन के लिए साहसी निर्णय की आवश्यकता होगी। ❑

(पूर्व निदेशक,एन.सी.ई.आर.टी.)

# उच्च शिक्षा के संकट

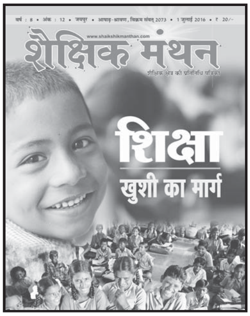


**उच्च शिक्षा का समूचा ढाँचा उपनिवेशकाल में बना। ज्ञान के किसी भी क्षेत्र में वह औपनिवेशिक छाप से कोई पुरजोर संघर्ष नहीं छेड़ सका। कोई आश्चर्य नहीं कि पूँजी की ताजी वैश्विक बटोर की लहर में भारत का ज्ञानतंत्र आसानी से बह गया। आज जो निजी संस्थान सरकारी विश्वविद्यालयों के उजाड़ में उभर रहे हैं, विशुद्ध रूप से व्यापारिक हैं। इंजीनियरी, कानून, प्रबंध विज्ञान और चिकित्सा जैसे क्षेत्रों में इन निजी संस्थानों के पास कोई सामाजिक दृष्टि नहीं है। उनके लिए आर्थिक लाभ ही स्वायत्तता का पैमाना है। उच्च शिक्षा का दायित्व है कि वह युवा छात्र को वैचारिक साहस का अनुभव दे। ऐसा अनुभव आज दुर्लभ हो चुका है। ऐसा अनुभव पाना एक अधिकार है, यह बात विद्यार्थी भूल चुके हैं। युवा होने के नाते वे नहीं जानते कि भारत की उच्च शिक्षा के संस्थान किस हादसे से गुजरे हैं।**

❑ **कृष्ण कुमार**

उच्च शिक्षा का दायरा जितना सीमित है, उसकी आंतरिक दुनिया उतनी ही रहस्यमय है। जनसामान्य की नजर से देखें तो कॉलेज या विश्वविद्यालय एक ऐसी जगह के रूप में दिखाई देंगे जहाँ बड़े लोगों के बच्चे डिग्री लेने जाते हैं। यह समझ इतनी गलत भी नहीं है, भले ही इधर के वर्षों में कॉलेज जाने वाले लड़के-लड़कियों का सामाजिक दायरा पहले की अपेक्षा कुछ फैला है। वहाँ डिग्री के दायरे से जाने वाली बात इसलिए सही है क्योंकि उच्च शिक्षा के अन्य उद्देश्य आज काफी सिकुड़े हुए नजर आते हैं। आज चल रहे अधिकांश संस्थानों को यदि कोई डिग्रियों के कारखाने की संज्ञा दे तो वह गलत नहीं होगी। ऐसी संस्थाएँ कम ही दिखती हैं जहाँ डिग्री के अर्जन का अनुपात ज्ञान और विद्या से सजीव रूप से जुड़ा हो। भारत में उच्च शिक्षा तरह-तरह की कमजोरियों से ग्रस्त पहले से थी, आज उसके संस्थान नई-पुरानी कई गंभीर बीमारियों से ग्रस्त हैं। कोई एक संकट नहीं है जिसकी वजह से उच्च शिक्षा का ढाँचा चरमराता नजर आता है।

समाचारों में आज यह तो कल वह संस्था किसी न किसी वजह से आ जाती है, पर विश्लेषण के लिए जरूरी वक्त मीडिया नहीं निकाल पाता। इसलिए जून के आरंभ में एक शाम एक टीवी चैनल ने अपने लोकप्रिय कार्यक्रम में उच्च शिक्षा को चर्चा का विषय बनाया तो मुझे कुछ सुखद आश्चर्य हुआ। प्रसंग था दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षकों द्वारा किया जा रहा विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) के एक नए आदेश का विरोध। उपर्युक्त टीवी चैनल के संबंधित एंकर इन दिनों अपने कार्यक्रम की शुरुआत एक लंबी व्याख्या से करते हैं, फिर किसी मेहमान से बात करते हैं। उस शाम उनकी मेहमान थीं दिल्ली विश्वविद्यालय के शिक्षक संघ की मौजूदा अध्यक्ष।

आधे घंटे का कार्यक्रम कब शुरू हुआ और कब बीत गया पता ही नहीं चला और यह टीस छोड़ गया कि हमारे संकट की बारी आई पर व्यथा समझाई न जा सकी। एक दर्शक के रूप में यह अनुभूति मुझे शायद इसलिए हुई क्योंकि उच्च शिक्षा या अपने विश्वविद्यालय का संकट एक विषय नहीं है, जिंदगी का हिस्सा है। विशेष कष्ट वह इस कारण देता है क्योंकि संस्था या नीति का संकट मेरे छात्रों के जीवन में धुएँ की तरह भर गया है। उनके दृष्टिकोण से उच्च शिक्षा की भीषण समस्याओं को देखना देश और समाज के अवसाद और वैचारिक माहौल की सड़न को स्पर्श करने

जैसा है। ऐसे निरंतर स्पर्श की हालत में कोई टीवी के पर्दे से आपका हाल पूछे तो यकायक तय करना कठिन होता है कि क्या बतायें और कहाँ से शुरू करें। टेलीविजन के संप्रेषण की अनिवार्य हड़बड़ी में यही हालत दिल्ली विश्वविद्यालय शिक्षक संघ की मौजूदा अध्यक्ष की थी।

पाठक अवश्य जानना चाहेंगे कि ऐसा क्या है इस संकट में जो टीवी जैसे व्यस्त माध्यम में आधा घंटा पाकर बेचैनी और घुटन को घटाने की जगह और बढ़ा देता है। इस स्वाभाविक जिज्ञासा का समाधान संकट के दो आयाम करते हैं। पहला आयाम उच्च शिक्षा के संकट के परिणामों का है जो समय बीतने के साथ-साथ गहनतर होते जा रहे हैं और जिनकी सांस्कृतिक कीमत तेजी से बढ़ती जा रही है। जाहिर है, यह कीमत समाज ही चुकायेगा, भले वह संकट को समझने में आज असमर्थ हो या उससे बेगाना हो। दूसरा आयाम शिक्षा और शिक्षक के दैनिक कष्ट का है। यूजीसी के नए आदेश पर अमल होगा तो शिक्षक के कर्म का अपमान और बढ़ेगा, युवा विद्यार्थियों के लिए शिक्षा का अनुभव, जो पहले ही काफी दुर्बल है, और खोखला हो जाएगा। यह दूसरा आयाम अंततः पहले आयाम में समा जाएगा और समाज को दोनों आयामों के मिल जाने से पैदा हुआ अंधेरा भर नजर आएगा।

उच्च शिक्षा के संकट का पहला आयाम आज सबसे प्रखर रूप में शिक्षा के व्यापारीकरण के रूप में अभिव्यक्ति पा रहा है। केंद्रीय और प्रांतीय सरकारों द्वारा चलाए जाने वाले विश्वविद्यालय और कॉलेज वित्तीय अकाल से जूझ रहे हैं और निजी विश्वविद्यालय, इंजीनियरी व मेडिकल संस्थान और कॉलेज ऊँची से ऊँची फीस लेकर भी फल-फूल रहे हैं। इन दोनों स्थितियों में विरोधाभास देखना गलत है। दिल्ली विवि शिक्षक संघ की अध्यक्ष ने अपने वक्तव्य में कहा कि उच्च शिक्षा का निजीकरण इसलिए बढ़ रहा है क्योंकि सरकारी संस्थायें उजाड़ी

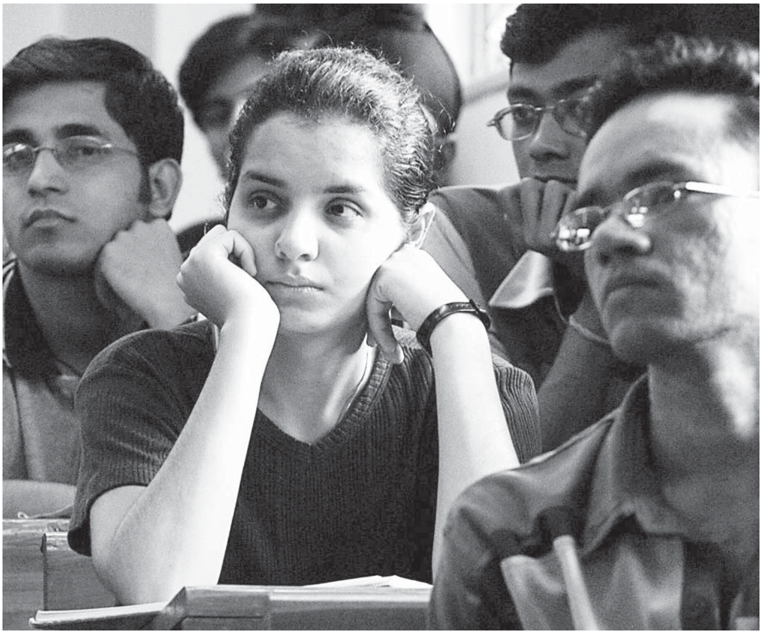

जा रही हैं। शिक्षा की सार्वजनिक बहसों में लोग अक्सर पूछते हैं कि यह कोई नीति है या महज एक परिस्थिति है। अनिल सदगोपाल कई वर्षों से लगातार कह रहे हैं कि शिक्षा का निजीकरण नब्बे के दशक में विश्व बैंक और अंतरराष्ट्रीय मुद्राकोष के मसविदे को मान कर लागू की गई आर्थिक दृष्टि और नीतियों का तार्किक परिणाम है। उस मसविदे की राजनैतिक स्वीकृति से बाजार की शक्ति बढ़ी है, राज्य की शक्ति और उसकी जिम्मेदारी की परिधि घटी है। यही नीति है, यही दिशा है।

इस सैद्धांतिक नजरिए में कई विवरण जोड़े जायें, तभी वह विश्लेषण के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। कुछ विवरण औपनिवेशिक इतिहास की ओर इशारा करते हैं, कुछ अन्य विवरण राजनैतिक समीकरणों का महत्त्व दिखाते हैं। उच्च शिक्षा का समूचा ढाँचा उपनिवेशकाल में बना। ज्ञान के किसी भी क्षेत्र में वह औपनिवेशिक छाप से कोई पुरजोर संघर्ष नहीं छेड़ सका। कोई आश्चर्य नहीं कि पूँजी की ताजी वैश्विक बटोर की लहर में भारत का ज्ञानतंत्र आसानी से बह गया। आज जो निजी संस्थान सरकारी विश्वविद्यालयों के उजाड़ में उभर रहे हैं, विशुद्ध रूप से व्यापारिक हैं। इंजीनियरी, कानून, प्रबंध विज्ञान और चिकित्सा जैसे क्षेत्रों में इन निजी संस्थानों के पास कोई सामाजिक दृष्टि नहीं है। उनके लिए आर्थिक लाभ ही स्वायत्तता का पैमाना है।

अमेरिका और आस्ट्रेलिया जैसे देशों में अपने जैसे संस्थानों से सहकार और विद्यार्थियों को बहुराष्ट्रीय कंपनियों में नौकरी दिलाने का दावा इन संस्थानों के लिए हैसियत के लक्षण हैं। उनकी यह सोच देश के नवधनिक वर्ग की विचारधारा से मेल खाती है और यह विचारधारा इधर के वर्षों में फैलती रही है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में आज इस विचारधारा का दबदबा है। विशेषकर तकनीकी विषयों की उच्च शिक्षा में निजी संस्थानों का वर्चस्व और सरकारी तंत्र का पराभव परस्पर जुड़ी हुई परिघटनाएँ हैं। दोनों को मिला कर देखें तो उच्च शिक्षा पिछले तीन दशकों से एक ऐतिहासिक मोड़ से गुजरती हुई दिखाई देती है। इस मोड़ से गुजरते हुए उस पर यह दबाव बढ़ता चला गया है कि वह अपनी वैचारिक भूमिका को तिलांजलि दे दे।

उच्च शिक्षा का समाज और उसकी संस्कृति में वैचारिक योगदान प्रत्यक्ष रूप से समाज विज्ञान, दर्शन, साहित्य और भाषा की पढ़ाई के रास्ते होता है। इन विषयों का व्यापारिक महत्त्व बहुत कम है, अतएव निजीकरण के चलते इन क्षेत्रों की पढ़ाई के अवसर घटते चले गए हैं। अमेरिका की तर्ज पर हाल में थोड़े-से निजी विश्वविद्यालयों ने 'लिबरल आर्ट्स' की पढ़ाई के मँहगे कोर्स शुरू किए हैं। समाज विज्ञान और मानविकी के विषयों का अध्ययन बहुत कुछ उस माहौल पर निर्भर होता है जो संस्था के वृहत्तर उद्देश्यों और संस्था व समाज के बीच संवाद से बनता है। यह संवाद शिक्षक के पेशे का आधार है।

निजी संस्थानों में सामान्य शिक्षक की कोई हैसियत नहीं होती और सरकारी संस्थाओं में शिक्षक की गरिमा को लगातार चोट पहुँचाई जाती रही है। ऐसा लगता है जैसे देश ने अपने शिक्षकों के खिलाफ एक युद्ध छेड़ रखा है। पिछले बीस-पचीस वर्षों से शिक्षकों की नियुक्ति का सिलसिला टूटता चला गया है। प्रश्न अब भर्ती की निष्पक्षता का नहीं रहा। अब भर्ती ही नहीं होती। बड़े-बड़े विश्वविद्यालय में शिक्षक चार-चार महीने की तदर्थ नियुक्ति पर पढ़ाते हैं और हजारों कक्षाएँ दिहाड़ी के हिसाब से पढ़ाई जाती हैं। हिंदी पट्टी के विश्वविद्यालयों और कॉलेजों में स्थायी शिक्षक बिरले हैं। कुछेक पदों के लिए विज्ञापन निकलता है तो एक-एक जगह के लिए हजारों युवा आवेदन देते हैं। उनकी योग्यता का मूल्यांकन करने के लिए यूजीसी ने 'एपीआई' नाम की प्रणाली निकाली है। इस प्रणाली में हर काम के लिए नंबर मिलते हैं। नंबरों की होड़ ने फर्जी शोध पत्रिकाओं और सेमिनारों जैसी अभूतपूर्व प्रवृत्तियों को जन्म दिया है। मर्ज बढ़ता गया है जैसे-जैसे दवा हुई है।

दिल्ली में शिक्षकों के आंदोलन का कारण यूजीसी का एक और नया आदेश है जिसके तहत प्रति सप्ताह ली जाने वाली कक्षाओं की संख्या बढ़ाई जाएगी। दुनिया भर के विश्वविद्यालयों की तुलना में हमारी व्यवस्था इतनी ज्यादा कक्षाएँ लगवाती है कि विद्यार्थी को स्वयं पढ़ने और सोचने का अवसर नहीं मिलता। सेमेस्टर प्रणाली थोपे जाने से यह अवसर और घट गया है और सारी पढ़ाई सिर्फ परीक्षा के लिए होने लगी है। पाठ्यक्रम को भी यूजीसी ने केंद्रीकृत कर देने की कोशिश की है। इतनी सारी भ्रमित नीतियों और पहले से चली आ रही विकृतियों से जूझता हुआ शिक्षण का पेशा अपना आत्मविश्वास खो चुका है।

उच्च शिक्षा का दायित्व है कि वह युवा छात्र को वैचारिक साहस का अनुभव दे। ऐसा अनुभव आज दुर्लभ हो चुका है। ऐसा अनुभव पाना एक अधिकार है, यह बात विद्यार्थी भूल चुके हैं। युवा होने के नाते वे नहीं जानते कि भारत की उच्च शिक्षा के संस्थान किस हादसे से गुजरे हैं। शिक्षा एक धीमी प्रक्रिया होती है, अत: उसकी सेहत बिगड़ने के दुष्परिणाम भी धीरे-धीरे प्रकट होंगे और समाज व देश को लंबे समय तक झेलने होंगे। ❑

## विदेशी संस्थानों संग कोर्स

केन्द्र सरकार ने उच्च शिक्षा में भारतीय शैक्षणिक संस्थानों को विदेशी संस्थानों के साथ समझौता कर कोर्स शुरू करने की इजाजत देने का फैसला किया है। इसके तहत उच्च ग्रेडिंग पाने वाले कॉलेज एवं विश्वविद्यालयों के साथ मिलकर देश में डिग्री कोर्स शुरू कर सकेंगे। मानव संसाधन विकास मंत्रालय के अनुसार यह फैसला विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (यूजीसी) की बैठक में किया गया। यहाँ यह बता दें कि यूजीसी ने 2012 में भी विदेशी संस्थानों को भारतीय संस्थानों के साथ कोर्स शुरू करने की अनुमति दी थी। लेकिन किसी विदेशी संस्थान ने इस योजना के तहत आवेदन नहीं किया। अब इसमें कुछ बदलाव किए गए हैं। अब जो व्यवस्था अमल में लाई जा रही है उसके तहत स्नातक पाठ्यक्रम के तहत कम से कम दो सेमेस्टर की पढ़ाई सहयोगी विश्वविद्यालय के विदेश स्थित परिसर में करनी अनिवार्य होगी। पोस्ट ग्रेजुएट कोर्स के मामले में एक सेमेस्टर की पढ़ाई विदेशी संस्थान में होगी। मंत्रालय के अनुसार जो भारतीय संस्थान किसी विदेशी संस्थान से समझौते के इच्छुक हैं, उन्हें ऑनलाइन आवेदन करना होगा। यूजीसी को 30 दिनों के भीतर आवेदन पर प्रतिक्रिया देनी होगी और दो महीने में उसका निपटारा करना होगा। यहाँ यह बता दें कि भारत में अपने परिसर खोलने के इच्छुक विदेशी विश्वविद्यालय स्पष्ट कानून न होने से ऐसा नहीं कर पा रहे हैं। संप्रग सरकार में इसकी अनुमति के लिए लाया गया विधेयक विरोध के कारण पारित नहीं हो पाया। इसके बाद सरकार ने यूजीसी के जरिए संयुक्त उपक्रम में विदेशी संस्थानों को लाने का प्रयास किया। इसमें टॉप-500 विश्वविद्यालयों की ही भारत में अनुमति की शर्त रखी, लेकिन किसी ने आवेदन ही नहीं किया। राजग सरकार ने नीति आयोग की दृष्टि पत्र बनाने का जिम्मा सौंपा, आयोग ने अभी कोई सुझाव पेश नहीं किया है। मानव विकास मंत्रालय का माना है कि हर साल भारत से करीब दो लाख नौजवान उच्च शिक्षा के लिए विदेश जाते हैं। नई व्यवस्था के अन्तर्गत छात्रों को जो डिग्री मिलेगी, वह भारतीय होगी। लेकिन उसमें विदेशी संस्थान का नाम और लोगो भी होगा। लेकिन यह संयुक्त डिग्री नहीं होगी। अलबता दोनों संस्थानों के बीच समझौते के कारण इस डिग्री के क्रेडिट को विदेश में भी मान्यता होगी। मंत्रालय के अनुसार अब भी कई संस्थान विदेशी संस्थानों के साथ मिलकर कोर्स चला रहे हैं। लेकिन ऐसे कोर्स की कोई कानूनी मान्यता नहीं है। सरकार ने ऐसे संस्थानों से एक साल के भीतर ए नियमों के तहत अनुमति लेकर अपने कोर्स को कानूनी जामा पहनाने का अनुरोध करेगी। वैसे स्नातक में दो तथा परास्नातक में एक सेमेस्टर की पढ़ाई विदेशी संस्थान में हो सकेगी।

# शिक्षा में बदलाव जरूरी

❑ **डॉ. संतोष त्रिपाठी**

**शि**क्षा, मानव प्रजाति के सुरक्षित अस्तित्व से जुड़ी है। सभ्याताओं के निर्माण से समस्याओं के समाधान तक प्रधान भूमिका में शिक्षा ही रहती है। आज की शिक्षा न तो समाज में कोई परिवर्तन कर पा रही है, न ही व्यवस्था में, इसलिये शिक्षा की सार्थकता पर प्रश्न उठना स्वाभाविक हैं। आज तक जितने भी शिक्षा आयोग, शिक्षा नीति बनाई गई सभी ने शिक्षा द्वारा मानव चरित्र निर्माण पर बल दिया और इसके लिए धर्म-दर्शन, मूल्य, अध्यात्म एवं संस्कृति जैसे विषयों को शिक्षा का अनिवार्य तत्व बनाए जाने की अनुशंसा की। बावजूद इसके 1948 से आज तक हमारी शिक्षा प्रणाली में इन विषयों को यथोचित स्थान नही दिया गया। कभी उदारवाद, कभी विज्ञानवाद, कभी आर्थिक विकासवाद के नाम पर हमारी सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली को ज्ञान आधारित अर्थव्यवस्था और अर्थव्यवस्था आधारित विकास की अवधारणा तक सीमित कर दिया गया। परिणामत: शिक्षा, रोटी के भय पर केन्द्रित हो गयी। भूख जनित भय युक्त शिक्षा से ऐसी सभ्यताओं पर संकट है जहाँ सांस्कृतिक प्रतिमान ही राष्ट्र एवं समाज के नीति निदेशक रहे हैं। संस्कृति प्रधान होने के कारण भारत भी ऐसा ही दंश को झेल रहा है। बड़े बड़े शिक्षा संस्थानों में भारत के टुकड़े करने के नारे लगते है, सांस्कृतिक ग्रंन्थो की होलियाँ जलाई जाती है, धार्मिक मान्यताओं का उपहास हो रहा है। आज देश की मानव बुद्धि और उसका चरित्र इतना राष्ट्र विरोधी बनता जा रहा है वह देश की संस्कृति, परम्परा, रीति रिवाज, धर्म, दर्शन, साहित्य सब का विनाश करने पर उतारू है। पूरा देश ऐसा बाजार बन गया है जहाँ संवेदनायें, संस्कार, नीति, कर्तव्य, राष्ट्र की कोई कीमत नही है। किसी भी ज्ञानी विज्ञानी में अब इतना साहस नही रहा कि युवाओं में ऐसी मानसिकता और उन्माद पैदा करने वाली शिक्षा की समीक्षा कर सके।

**शिक्षा प्रणाली बंधक बनी, हो क्या रहा है?**

युवाओं के भाग्य और चरित्र सँवारने वाली शिक्षा का अचानक चरित्र बदल लेना साधारण घटना नहीं है। निवेश और उपनिवेशवाद राष्ट्रों के शह पर सुरिक्षत बाजार की तलाश में देश की पूरी शिक्षा प्रणाली बंधक बन गयी है। विचारधारा के नाम पर विज्ञानवाद, बदलाव, उदारीकरण, विकास, लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता एवं भूमण्डलीकरण जैसे स्वरचित परिभाषाओं से हमारे बुद्धि व व्यवहार को इस तरह मंत्रमुग्ध कर दिया गया है कि हमें अपनी संस्कृति, परम्परा और सामाजिक ताने बाने से नफरत सी होने लगी है। आज का युवा बड़े गर्व के साथ अपनी सभ्यताओं की जड़े खोदने पर आमादा है। हमारा पारिवारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक ढाँचा चरमरा रहा है और हम अभिव्यक्ति की आजादी के नाम पर पाकिस्तान की जयकार करते है। भूख का भय दिखाकर पूरी शिक्षा को बाजार के हवाले किया जा रहा है। उपनिवेशवाद, निवेश का चोला पहनकर आधुनिकता और परिवर्तनरूपी तर्को के साथ हमारी विरासत का अंत कर रहा है और हम विकास दर के काल्पनिक आँकड़े छूने को बिलबिला रहे है। जिस सांस्कृतिक विरासत से हमे वैश्विक पहचान मिली उसी देश का बचपन अपराधग्रस्त हो रहा है। जहाँ नारियों के त्याग, सहयोग और बलिदान की गाथायें हमें गौरवान्वित करती रही उसी देश में आज महिला पुरुष की श्रेष्ठता पर जंग लड़ी जा रही है। जहाँ श्रवण कुमार और मर्यादा पुरुषोत्तम राम जैसे पुत्रों की गाथा हमें महान कर्तव्यों की प्रेरणा देती है वहीं वृद्धाश्रमों में बदहाल माता-पिता की सिसकियाँ हमें झकझोर रही है।

इसी नये विचार और चरित्र को बनाने के लिए लगातार प्रयास किये जा रहे हैं। इसी वातावरण को पाने के लिए आज सूर, तुलसी, कबीर, रहीम, वेद उपनिषद, धर्म, दर्शन जैसे विषय का उपहास और विरोध हो रहा है। मनुवाद, जातिवाद, के नाम पर इन रचनाओं का मानमर्दन, तिरस्कार क्या उन्मुक्त और संस्कारहीन युवाओं के निर्माण की भूमिका नहीं बनाता, इसका उत्तर भी विरोधियों को देना चाहिए। दुर्गा को चरित्रहीन और महिषासुर को भगवान मान लेने से देश कैसे धर्मनिरपेक्ष बन जाता है।

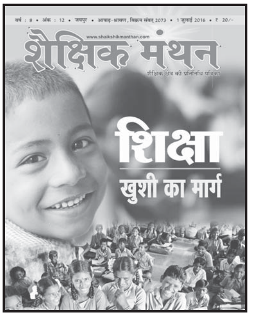


**आधुनिकता और लोकतंत्र के नाम पर तर्कहीन भाषणों से सांस्कृतिक प्रतिमानों को ध्वस्त करना बुद्धिमानी नहीं है। इसलिए संतानों के सुरक्षित और सम्मानित जीवन के लिए शिक्षा में आध्यात्मिक साहित्यिक और दार्शनिक प्रत्ययों को अनिवार्य रूप से सम्मिलित करना चाहिए। यदि सभ्य कहलाने वाले देश व्यावसायिक हितों के लिए हमारे शैक्षिक तंत्र को अधिग्रहीत कर सकते हैं तो पीढ़ियों को बचाने के लिए हम अपनी परम्पराओं के साथ क्यों नहीं खड़े होते। यदि बाजार के लिए बुद्धि को नियंत्रित करने का प्रयास किया जा सकता है तो सुरक्षित भविष्य के लिए आध्यात्मिक और सांस्कृतिक प्रत्ययों को शिक्षा का आधार क्यों नहीं बनाया जा सकता।**

### शिक्षा से खिलवाड़ क्यों?

सभी माता-पिता अपनी औलाद को शिक्षित, संस्कारित और आज्ञाकारी बनाना चाहते हैं। दुर्गा को भगवती मानने वाले भी और महिषासुर को भगवान समझने वाले भी, तो फिर विचारधारा के नाम पर शिक्षा से खिलवाड़ क्यों। मूल्य, कर्तव्य, नीति, धर्म की शिक्षा संस्कार और आज्ञाकारिता पैदा कर सकती है। क्या राम का चरित्र हमें पुत्र धर्म नहीं सिखाता क्या गीता हमें कर्तव्य नही सिखाती, क्या वेद-उपनिषद से हमे त्याग और संयम की शिक्षा नहीं मिलती फिर इन ग्रंथों का विरोध क्यों? क्या परम्परा का सम्मान अपराध है? क्यों इनका विरोध करके हम भावी पीढ़ियों के चरित्र को बिगाड़ रहे है। आधुनिकता और लोकतंत्र के नाम पर तर्कहीन भाषणों से सांस्कृतिक प्रतिमानों को ध्वस्त करना बुद्धिमानी नहीं है। इसलिए संतानों के सुरक्षित और सम्मानित जीवन के लिए शिक्षा में आध्यात्मिक साहित्यिक और दार्शनिक प्रत्ययों को अनिवार्य रूप से सम्मिलित करना चाहिए। यदि सभ्य कहलाने वाले देश व्यावसायिक हितों के लिए हमारे शैक्षिक तंत्र को अधिग्रहीत कर सकते हैं तो पीढ़ियों को बचाने के लिए हम अपनी परम्पराओं के साथ क्यों नहीं खड़े होते। यदि बाजार के लिए बुद्धि को नियंत्रित करने का प्रयास किया जा सकता है तो सुरक्षित भविष्य के लिए आध्यात्मिक और सांस्कृतिक प्रत्ययों को शिक्षा का आधार क्यों नहीं बनाया जा सकता।

### भारतीय तत्वों का विरोध

परम्परागत साहित्य व संस्कृति की शिक्षा का विरोध न तो विचारधारा पर है, न लोकतंत्र पर। विरोध मात्र इसलिए है कि यह शिक्षा उन्मुक्त बाजार का निर्माण नहीं करती। त्याग, आदर्श, संस्कार की शिक्षा देने वाली हमारी आध्यात्मिक साहित्यिक रचनाए भोगवाद का समर्थन नहीं करती और बिना भोग की आस्था से सुरक्षित बाजार नहीं बनाया जा सकता। इसलिए शिक्षा में भारतीय तत्वों का विरोध किया जाता है। सभ्य और असभ्य की परिभाषा तय करने का अधिकार जो संस्कृति का था उसे बाजार ने छीन लिया है। आज हम ऐसे कालखण्ड में रहने को अभिशिप्त है जहाँ भोग और उन्मुक्त जीवन के कोलाहल के अतिरिक्त सिर्फ विचारहीनता है। परम्पराओं के करुणक्रंदन के बीच विलासिता का ताण्डव है। पूर्वजों के विरासत पर उदासीन होने की मजबूरी है। विज्ञान और विकास के अट्टहास के बीच परम्पराओं की सिसकियाँ हमें नहीं सुनाई पड़ रही है। पीढ़ी के लिए हम क्या विरासत छोड़ रहे है। इसकी जवाबदेही भी हमारी है किन्तु आत्ममुग्धता से पैदा हमारी मूकबधिरता ने हमें चेतना शून्य बना दिया है। इतना सब कुछ होते भी जीवन निर्माण करने वाली महान रचनाओं का विरोध इसी देश के देशवासी आधुनिकता के नाम पर करते हैं तो आश्चर्य होता है।

### आत्मानुशासन आज की जरूरत

आज मूल्य और आत्मानुशासन की अधिक जरूरत है। जो व्यक्ति स्वयं पर अनुशासन नहीं कर सकता, अपने आवेग और संवेग पर नियंत्रण नहीं कर सकता वह सभ्य नहीं हो सकता। सभी विद्याओं में निष्णात् होकर भी यदि मूल्य और आत्मानुशासन नहीं है तो वह समाज के लिए गम्भीर खतरा है। ऐसे ही लोग दुनिया को खत्म करने की सामग्री का अंबार लगा रहे है। दूसरी महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है सामाजिक चेतना की। आज शिक्षा जिस प्रकार से व्यक्तिवाद या स्वार्थवाद का पोषण कर रही है उससे सामाजिक चेतना नष्ट हो रही है। अपराध, अत्याचार और शोषण, खण्डित समाज की उपज है। इसके अतिरिक्त आज अत्यंत आवश्यकता है संवेदनशीलता के विकास की। आज की शिक्षा ने मानव की संवेदनशीलता को जड़ बना दिया है। मानव आवश्यकतापूर्ति की मशीन जैसा बनता जा रहा है। उसके अन्दर दूसरे के कष्ट की अनुभूति नहीं हो रही है। उसकी नैतिकता और प्रामाणिकता बिखर चुकी है वह आक्रमक और हिंसक बन रहा है। इसलिए शिक्षा में संवदेनशीलता पैदा करने वाले पाठ्यक्रमों का समावेश आवश्यक है। जिस प्रकार भाषा, गणित, विज्ञान भूगोल जैसे विषयों को पढ़ाने पर जोर दिया जाता है उसी प्रकार हमारे चरित्र निर्माण पर भी जोर दिया जाना चाहिए। चरित्र की कमी से सारे ज्ञान विज्ञान खोखले बन जाते हैं। कोरी बौद्धिकता आदमी को ज्यादा खतरनाक बना रही है। अत: शैक्षिक व्यवस्था की पुनर्समीक्षा जरूरी है। भावी पीढ़ियों के विचार व व्यवहार के निर्धारण के लिए जिम्मेदारी हमारी है सरकार की नही। इसलिए हमें अपनी शिक्षा प्रणाली में ऐसी पाठ्य सामग्री का समावेश करना जरूरी है जो हमारे बच्चों को ज्ञानवान आचारवान और संस्कारवान बना सकें। सही अर्थों में ऐसे मानव का निर्माण अब आवश्यक है जो अपने देश, परम्परा, इतिहास और संस्कृति पर गर्व करें। इसके लिए आवश्यक है हमारे अन्दर आध्यात्मिक प्रत्ययों के प्रति आस्था, जैसा मोह हमें भौतिकी और अर्थव्यवस्था से है वैसा ही मोह हमें आत्मा, ईश्वर, कर्म, पुनर्जन्म के प्रति भी होना चाहिए। बचपन में सीखा गया यह संस्कार 'अच्छे कर्म का अच्छा और बुरे कर्म का बुरा नतीजा' मानव जीवन के चरित्र और व्यवहार को उसी प्रकार प्रभावित करते हैं जिस प्रकार एनस्थीसिया चेतना पर असर करता है। ईश्वर, आत्मा, पुनर्जन्म जैसी आध्यात्मिक मान्यतायें भले ही प्रत्यक्षवादियों और भोगवादियों की आँखों में खटकती हो किन्तु ये मान्यतायें मानव व्यवहार को सभ्य बनाने की महान उत्प्रेरक हैं। यदि हम निरपेक्ष रूप से समझने की कोशिश करें तो भारतीय प्राच्य विधाओं (अध्यात्म, धर्म, दर्शन) का अध्ययन और तज्जनित आस्था, विज्ञान के व्यावसायिक आविष्कारों से कहीं ज्यादा श्रेष्ठ है। ❑

(व्याख्याता, राजकीय बांगड़ महाविद्यालय, पाली (राज.)

# ज्ञान और पढ़ाई

मनुष्य होने का एक सबसे प्रतीकात्मक लक्षण चिंतनशील होना है। बाकी तो जीवन, भूख, काम और क्रीड़ा पशुओं में भी होते हैं। चिंतनशील होना कर्म की गुणवत्ता और उसकी दिशा पर आत्मविश्लेषण करने का एक रास्ता है। चिंतन की प्रगति अंधेरे कमरों के बीच रोशनदान खोलने का एक साधन है और इस प्रक्रिया में वैचारिकी का निर्माण उसके संप्रेषण और संवाद का एक सबसे सुगम जरिया हैं किताबें। हर किताब कुछ कहती है- नया-पुराना, परंपरा-परिवर्तन, राग-विराग, प्रत्यय-उपसर्ग और यह चलता रहता है। आप क्या पढ़ते हैं और क्या पढ़ना पसंद करते हैं, उसके माध्यम से आपके बारे में बहुत कुछ पता लगाया जा सकता है। आप साहित्य में रूमानियत ढूँढ़ते हैं या यथार्थ की यातनाएँ या फिर यथार्थ को रूमानियत की चाशनी में परोसे जाने के पक्षधर हैं। फिक्शन या सत्य के मध्य संवाद चाहते हैं या दोनों को नकार कर किसी और ही जज्बे की चाह रखते हैं, यह सब किताबों को पढ़ने की असीम संभावनाओं की देन है।

हम पढ़ते हैं, क्योंकि हमें अपनी मौलिकता गढ़नी होती है। हमें यह कहते हुए एक आत्मसम्मान और गर्व की अनुभूति होती है कि किसी भी मुद्दे पर हमारे विचार क्या हैं। जो विचार में अपनी मौलिकता का दावा पेश नहीं कर पाते, वे इसे दूसरों से उधार ले लेते हैं, कभी स्रोत बता कर और कभी बिना बतायें। लेकिन जिसे हम अपनी विश्व-दृष्टि कहते नहीं थकते, क्या वह बस किताबों से निर्मित होती है? क्या उसमें समाज और संस्कृति का एक बड़ा योगदान नहीं है?

इस पर सबके अपने 'मौलिक' विचार हो सकते हैं। मेरा मानना है कि विचार इतिहास में निर्मित होता है और इसका निर्माण एक प्रक्रिया है, जो निरंतर चलती रहती है। जिन विचारों के लिए यह प्रक्रिया रुक जाती है, हम उनकी बातें कम करते हैं। फिर से हमारी समकालीन राजनीति किन विचारों से संचालित होती हैं, इससे भी उनकी केंद्रीयता का अनुमान लगाया जा सकता है। उत्तर-औपनिवेशिक भारत में नेहरूवादी विचार के वर्चस्व के मध्य आज संघ का विचार फिर से केंद्र में है, क्योंकि आज की राजनीति अब वहाँ स्थापित है।

अगर एक बड़ी पेचीदा प्रक्रिया को संक्षेप में सरल करें, तो हम जिन किताबों के माध्यम से अपने मौलिक विचार गढ़ते हैं, वे हमारे हैं ही नहीं।

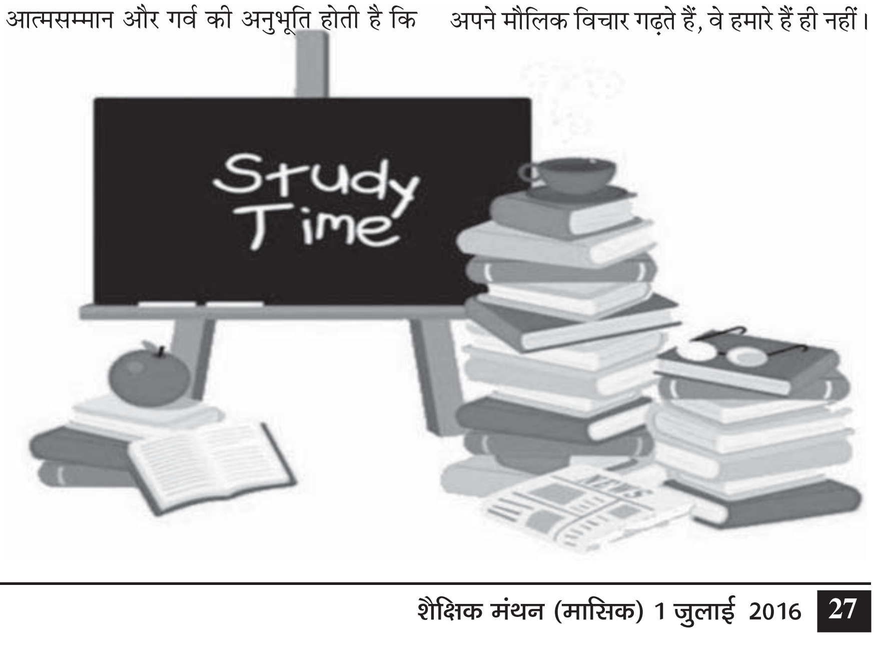


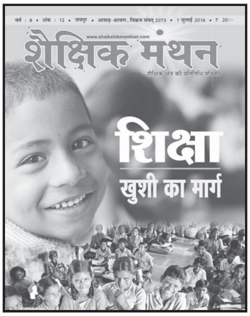


**अगर एक बड़ी पेचीदा प्रक्रिया को संक्षेप में सरल करें, तो हम जिन किताबों के माध्यम से अपने मौलिक विचार गढ़ते हैं, वे हमारे हैं ही नहीं। हमारे सामने होते हैं कुछ चार-पाँच वर्चस्व-विचार, जिनका निर्माण इतिहास के विभिन्न चरणों में हुआ है और हम उनके एक अभिन्न अंग हैं। हमें बस इतनी स्वतंत्रता है कि हम एक विचार के वर्चस्व को स्वीकार करें और दूसरे से अलग होने का दावा करें। हमें बस एक विचार से सहमत या असहमत होने की छूट है, उनसे बाहर जाकर विचरण करने की नहीं और इस सहमति या असहमति का इतिहास हमारे लिए एक आत्मकथा है। हमारा समाजीकरण, संस्कृति की संरचनाएँ और वर्ग-जाति की पृष्ठभूमि इस विचार की आत्मकथा का निर्माण करती है।**

हमारे सामने होते हैं कुछ चार–पाँच वर्चस्व–विचार, जिनका निर्माण इतिहास के विभिन्न चरणों में हुआ है और हम उनके एक अभिन्न अंग हैं। हमें बस इतनी स्वतंत्रता है कि हम एक विचार के वर्चस्व को स्वीकार करें और दूसरे से अलग होने का दावा करें। हमें बस एक विचार से सहमत या असहमत होने की छूट है, उनसे बाहर जाकर विचरण करने की नहीं और इस सहमति या असहमति का इतिहास हमारे लिए एक आत्मकथा है। हमारा सामाजीकरण, संस्कृति की संरचनाएँ और वर्ग–जाति की पृष्ठभूमि इस विचार की आत्मकथा का निर्माण करती है।

हम प्रयत्न करते हैं कि 'हेजेमनी' या नायकत्व को तोड़ बहार हो जाएं।

लेकिन क्या एक 'हेजेमनी' का टूटना दूसरे के निर्माण का आरंभ नहीं है? हमने पढ़ा है कि कैसे हमारे 'ग्रेट मैन इतिहास दृष्टि' में नेतृत्व अलग–अलग लेखकों को पढ़ कर नए समाज की रचना कर पाने को प्रेरित हुए। फ्रांसीसी क्रांति में रूसो, मोंतेस्क्यु और वाल्टेयर का नाम लेना हम नहीं भूलते। लेकिन क्या 'अंसिएं रेजीम' से बाहर आधुनिक समाज में उतनी ही खुशहाली का दावा कर पाना न्यायोचित लगता है? क्या पाश्चात्य की आधुनिकता ने एक स्वावलंबी और शांत–समृद्ध समाज का निर्माण किया है? तो क्या विचारों के बीच संवाद बस इन्हीं मायनों में सफल है कि वे एक मताधिकार के लिए हमें आमंत्रित करते हैं? जो आज बेस्ट–सेलर है, कल रहे न रहे! जिसे जो चुनना हो, चुन लें।

किताबें हमारा अज्ञान तभी दूर कर सकती हैं, जब यह मताधिकार की प्रक्रिया बस एक का दूसरे के ऊपर चुनाव से अधिक कुछ और बन जाए। एक ऐसी धरा, जहाँ रामायण के साथ फूको की बात करना हास्यास्पद न हो। जहाँ मार्क्स के साथ हिंदू मत को भी एक संवाद में समझा जा सके। विचारों का एकाकीपन संसार में रहते हुए संत होने के लिए ठीक है, संसारी होने के लिए नहीं। अब टेक्स्ट, कॉन्टेक्स्ट और अंतर–टेक्स्ट प्रक्रिया से ही होकर किसी भी उद्धार का कारण बन सकती है। किसी भी विचार को उसकी कुछ इकाइयों के लिए नकार देना सड़क की राजनीति हो सकती है, ज्ञान के लिए श्रमदान नहीं। इसलिए विचारों की मौलिकता तभी बनेगी जब किसी एक विचार के वर्चस्व को तोड़, उसमें और धाराओं को आमंत्रित कर उसे और विस्तृत बनाया जाए। ❑

# AJKLTF Organize State Level Convention of Teachers

All Jammu Kashmir and Ladakh Teachers Federation (Ajkltf), Affiliated to Akhil Bhartiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh (ABRSM), organized one day State Level teachers convention in Jammu on 13 June.

Prof. Jagdish Prasad Singhal, Vice Chancellor, University of Rajasthan, Jaipur was the main speaker in the convention, during which the Federation expressed concern over the alarming situation in Education Department and strongly conveyed to the State Government about ned of over all reforms in the department.

Prof. Jagdish Prasad stressed on the need of Indianisation of education for the betterment of the country and the society as well. He said that the education policy should be made in the interest of nation and the teachers should be recognized and respected by the society. He also shared his experiences with the teachers and stressed on the need of unity among the teachers community to get their problems solved.

Ratan Sharma, State General Secretary, in his address, highlighted the organizational activities in the State and raised certain demands which need immediate attention of the State Government. He said that there was a need of a separate Independent Education.

Commission in the State for the redressal of the genuine grievances of the teaching community and overall development of the department.

He stressed on the need of a concrete transfer policy and implementation of the same in true letter and spirit. Supporting demands of Rehbar-e-Taleem teachers, he said "ReT teachers are part and parcel of the teaching community and they must not be treated as 2nd class teachers and their demands must be considered sympathetically.

Over 300 delegates from across the State participated in the convention. Mohan Singh, State president of the Federation, earlier read the welcome speech. Delegates from Kashmir, led by provincial president Raja Mohan Amin Khan, also took part in the convention.

Maheshwer Prasad, Working President, presented vote of thanks on the occasion while Dev Raj Thakur conducted the proceedings.

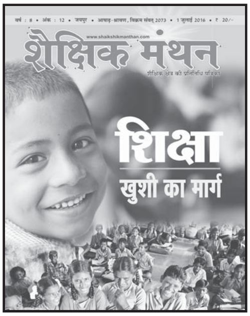


**राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य देश में शिक्षा के विकास को एक निश्चित दिशा देने के लिये एक व्यापक फ्रेमवर्क बनाने का होता है। परिवर्तन की समयबद्ध आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु नई शिक्षा नीति आती रही है। कारण एक शिक्षा नीति की अवधि में कुछेक ऐसी ऐतिहासिक घटनायें घटती हैं जिनके कारण राष्ट्रीय शिक्षा नीति में परिवर्तन व परिवर्द्धन आवश्यक हो जाता है। उदाहरण के लिये 1976 में भारत के संविधान में हुये 42 वें संशोधन जिसके द्वारा शिक्षा को राज्य की सूची से हटा कर समवर्ती सूची में डाला गया। इसी प्रकार 2002 में 86 वें संविधान संशोधन जिसके द्वारा शिक्षा अनिवार्य रूप से लागू किया जाने वाला मौलिक अधिकार बना। यह उस समय की विद्यमान सरकार को देश की शिक्षा व्यवस्था पर अपनी अमिट छाप छोड़ने का अवसर प्रदान करती है।**

# राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्‌भव व विकास

**तीसरी राष्ट्रीय शिक्षा नीति के संबंध में सुब्रामणियम समिति की अनुशंसाओं पर जारी बहस के अवसर पर लेखिका भारत की शिक्षा व्यवस्था पर अमिट छाप छोड़ने वाली सरकार के अति-महत्त्वपूर्ण अस्त्र के ऐतिहासिक विकास पर प्रकाश डाल रही है।**

❑ **रितिका चौपड़ा**

सरकार ने राट्रीय शिक्षा नीति का निर्माण की प्रक्रिया गत वर्ष विस्तृत व गहन ग्रास रूट सलाह मशविरे से प्रारंभ की। इस सलाह मशविरे के परिणामस्वरूप प्राप्त फीडबैक पर विस्तृित रूप में गहन मनन कर सुझाव देने के लिये गठित समिति ने नीति निर्धारक दस्तावेज में शामिल करने योग्य 90 इनपुट्स की अनुशंसा की है। समिति के अध्यक्ष श्री टी.एस.आर. सुब्रामनियम द्वारा इन पुट्स पर सरकार द्वारा बरती जा रही गोपनीयता पर प्रकट की गई अप्रसन्नता से विवाद उत्पन्न हो गया है। उन्होंने मानव संसाधन विकास मंत्री श्रीमती स्मृति ईरानी से आग्रह किया कि वे इन सुझावों को जनता के लिये जारी करें। इसे जारी नहीं करने पर स्वयं जारी करने की बात कही है। इसे सरकार ने स्वीकार नहीं किया और श्री सुब्रामनियम ने प्रतिवेदन के मुख्य-मुख्य बिन्दुओं को स्वयं जारी कर दिया। इनमें से कुछ बहुत ही विवादास्पद हो सकते हैं। प्रभावित राष्ट्रीय शिक्षा के प्रारूप पर गंभीर बहस को प्रेरित कर दिया है।

**राष्ट्रीय शिक्षा नीति से किन उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है? सरकार इसके निर्माण में अत्यधिक रुचि क्यों लेती है?**

राष्ट्रीय शिक्षा नीति का उद्देश्य देश में शिक्षा के विकास को एक निश्चित दिशा देने के लिये एक व्यापक फ्रेमवर्क बनाने का होता है। परिवर्तन की समयबद्ध आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु नई शिक्षा नीति आती रही है। कारण एक शिक्षा नीति की अवधि में कुछेक ऐसी ऐतिहासिक घटनायें घटती हैं जिनके कारण राष्ट्रीय शिक्षा नीति में परिवर्तन व परिवर्द्धन आवश्यक हो जाता है। उदाहरण के लिये 1976 में भारत के संविधान में हुये 42 वें संशोधन जिसके द्वारा शिक्षा को राज्य की सूची से हटा कर समवर्ती सूची में डाला गया। इसी प्रकार 2002 में 86 वें संविधान संशोधन जिसके द्वारा शिक्षा अनिवार्य रूप से लागू किया जाने वाला मौलिक अधिकार बना। यह उस समय की विद्यमान सरकार को देश की शिक्षा व्यवस्था पर अपनी अमिट छाप छोड़ने का अवसर प्रदान करती है। जनता पार्टी की सरकार जिसमें जनसंघ जो बाद में भारतीय जनता पार्टी बनी, एक महत्त्वपूर्ण अंग थी, ने 1979 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाने का प्रयास किया। परन्तु केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड (Central Advisory Board for Education) से इसे स्वीकृति नहीं मिल सकी। स्मरण रहे कि यह सलाहकार बोर्ड, शिक्षा के क्षेत्र में सबसे महत्त्वपूर्ण सलाहकार संस्था है। इस प्रकार से भारतीय जनता पार्टी का राष्ट्रीय शिक्षा नीति बनाने का यह दूसरा प्रयास है।

**क्या सभी राज्यों द्वारा राष्ट्रीय शिक्षा नीति का अनुपालना अनिवार्य है?**

राष्ट्रीय शिक्षा नीति वास्तव में शिक्षा को एक वृहद दिशा प्रदान करती है और राज्यों से अपेक्षा की जाती है कि इसके अनुसार ही कार्य करें। इसके लिये वे बाध्य नहीं है। प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति में अपनाये गये त्रिभाषा फार्मूले को तमिलनाडु सरकार ने आज तक भी स्वीकार नहीं किया है।

**अब तक ऐसी कितनी नीतियाँ बन चुकी है?**

अब तक ऐसी दो शिक्षा नीतियाँ 1968 व 1986 में बन चुकी हैं। 1968 में श्रीमती इंदिरा गाँधी के प्रधानमंत्रित्व काल में बनी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986, 1992 में संशोधित की गई। जब श्री नरसिम्हाराव प्रधानमंत्री थे। एनडीए द्वितीय की सरकार नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति तैयार करने की प्रक्रिया में है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति तैयार करने की आवश्यकता भारत की विशाल जनसंख्या के बदलते स्वरूप के अनुरूप गुणवत्तापूर्ण, नवाचारों और शोध की समुचित व्यवस्था वाली शिक्षा व्यवस्था तैयार करने के कारण हो रही है।

**वे कौन सी परिस्थितियाँ थी, जिनके कारण 1968 में प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति घोषित की गई?**

राष्ट्रीय शिक्षा नीति अपनाने का प्रारंभ 1 मई 1964 सांसद श्री सिद्धेश्वर प्रसाद द्वारा लोकसभा में एक प्रस्ताव प्रस्तुत करने से हुआ। श्री सिद्धेश्वर प्रसाद ने शिक्षा पर समुचित ध्यान नहीं देने के लिये सरकार की कड़ी आलोचना करते हुये कहा कि केन्द्र सरकार के पास शिक्षा के प्रति एक सम्मानित दृष्टि व सुनिश्चित दर्शन नहीं है। उन्होंने सुझाव दिया कि एक संसदीय समिति गठित की जानी चाहिये जो कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति के निर्माण पर विचार करे। तत्कालीन शिक्षा मंत्री श्री एम.सी. छागला ने इस सुझाव को स्वीकार किया कि शिक्षा के लिये एक समन्वित राष्ट्रीय शिक्षा नीति होनी चाहिये। श्री छागला ने घोषणा की कि इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये प्रख्यात शिक्षाविदों की सदस्यता वाले राष्ट्रीय आयोग की घोषणा केन्द्र सरकार शीघ्र ही करेगी। उन्होंने श्री सिद्धेश्वर प्रसाद से अपना प्रस्ताव वापस लेने का आग्रह किया। जिसे श्री प्रसाद ने स्वीकार कर लिया। इसी वर्ष श्री छागला की घोषणा के अनुरूप प्रख्यात शिक्षाविद् व विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के तत्कालीन अध्यक्ष डॉ. दौलत सिंह कोठारी की अध्यक्षता में एक 17 सदस्यीय राष्ट्रीय शिक्षा आयोग बनाया गया। इस आयोग की अनुशंषाओं को समाहित करते हुये 1968 में संसद ने प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति को स्वीकृति प्रदान की।

**द्वितीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति, प्रथम शिक्षा नीति से किस प्रकार भिन्न थी?**

1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में एक ऐसी समान स्कूली शिक्षा व्यवस्था विकसित करने का लक्ष्य था जिसमें जाति वर्ग, धर्म, लिंग आदि के आधार पर कोई भेद-भाव किये बिना सभी छात्रों की एक स्तर तक तुलनात्मक गुणवत्ता वाली शिक्षा तक पहुँच हो। नीति में सम्पूर्ण देश में एक समान शिक्षा के ढ़ाँचे जो 10+2+3 के नाम से जाना जाता है, कि व्यवस्था की गई। यह व्यवस्था संपूर्ण देश में लागू हो चुकी है। इस नीति में ही व्यवस्था की गई कि प्रारंभिक शिक्षा मातृभाषा में ही दी जानी चाहिये।

**राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर सुझाव आमंत्रित : शैक्षिक मंथन भी ज्ञापन देगा**

मानव संसाधन विकास मंत्रालय ने 200 पेज का एक मसविदा पत्र जारी कर शिक्षा के सभी संबद्ध पक्षों के साथ-साथ जन साधारण के विचार व सुझाव 31 जुलाई 2016 तक आमंत्रित किये हैं। शैक्षिक मंथन भी इस पर पाठकों व विद्वतजनों के सुझाव आमंत्रित करता है। इन्हीं सुझावों के आधार पर शैक्षिक मंथन संस्थान सुझावों का ज्ञापन मानव संसाधन विकास मंत्री को सोंपेगा। आपके सुझावों का स्वागत है।

इस नीति विश्वविद्यालयीय व्यवस्था में शोध व्यवस्था को सुदृढ़ किये जाने पर जोर दिया गया।

1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी की सोच का व्यापक प्रभाव थे। वे शिक्षा में आधुनिकीकरण के पक्षधर थे, और इनफारमेशन टक्नोलोजी का शिक्षा में अधिक से अधिक उपयोग करना चाहते थे। इस नीति में शिक्षक शिक्षा को पुनर्गठित करने, बचपन के प्रारंभिक वर्षों की चिन्ता करने (Early Childhood care), महिला सशक्तीकरण, प्रौढ़-वयस्क साक्षरता का प्रसार करने पर विशेष बल दिया गया। इस नीति में कतिपय उन विचारों, जिन पर पूर्व में अवरोध रहा है, को भी सम्मिलित किया गया। इनमें कॉलेजों और विश्वविद्यालयों को अधिक स्वायत्तता देना, शिक्षण संस्थाओं के चुनिन्दा विकास का अवसर देने को शामिल किया गया। प्रथम व द्वितीय दोनों ही शिक्षानीतियों का आधार उच्च गुणवत्ता वाली शिक्षा के अवसर प्रदान करना तथा शिक्षा व विकास के संबंध को सुदृढ़ करना रहा।

**इन नीतियों का क्रियान्वयन कैसा रहा है?**

प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति की अपेक्षा द्वितीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति का क्रियान्वयन बेहतर रहा। प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति को लागू करने के लिये उपयुक्त कार्यक्रम बनाने, उन्हें लागू करने में सरकार सफल नहीं रही। इन कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में पर्याप्त वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था का अभाव भी बड़ा कारण था। प्रथम राष्ट्रीय शिक्षा नीति के समय शिक्षा राज्यों का विषय थी। इस नीति को प्रभावी रूप से कैसे लागू किया जायेगा, में केन्द्र सरकार की भूमिका बहुत ही सीमित थी। द्वितीय राष्ट्रीय शिक्षा नीति

के समय तक शिक्षा समवर्ती सूची में आ चुकी थी, जिससे केन्द्र इस नीति के क्रियान्वयन में प्रभावी भूमिका निभाने में समर्थ थी। केन्द्र सरकार ने इसके क्रियान्वयन हेतु अनेक कार्यक्रम बनाये व लागू किये।

**राष्ट्रीय शिक्षा नीति प्रथम व द्वितीय की मुख्य लीगेसी कैसी है?**

जैसा कि हम जानते हैं 10+2+3 (जिसमें 10 वर्ष सैकेण्डरी स्कूल +2 वर्ष उच्च सैकेण्डरी 3 वर्ष स्नातक शिक्षा) का शिक्षा ढाँचा तथा त्रिभाषा का फार्मूला जिसे अधिकांश राज्यों ने अपनाया है, इन नीतियों की सदैव विद्यमान रहने वाली उपलब्धियाँ हैं। इसी प्रकार विज्ञान व गणित की शिक्षा को प्राथमिकता देना अन्य बड़ी लीगेसी है? सर्व शिक्षा अभियान, मध्याह्न भोजन योजना, नवोदय विद्यालय व केन्द्रीय विद्यालय तथा शिक्षा में सूचना तकनीक का बढ़ता उपयोग 1986 की नीति की उपलब्धियाँ हैं।

**नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में और कितना समय?**

पूर्व कैबिनेट सचिव श्री टी.एस. आर. सुब्रामनियम की अध्यक्षता में गठित समिति को मानव संसाधन विकास मंत्री श्रीमती स्मृति ईरानी ने दायित्व सौंपा था कि नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति पर देश भर से प्राप्त फीडबैक का अध्ययन कर सरकार को नीति बनाने के लिये इनपुट प्रदान करे। पाँच सदस्यीय समिति में गत मई माह में अपना प्रतिवेदन सरकार को सौंप दिया। केन्द्र सरकार समिति की अनुशंषाओं के आधार पर राष्ट्रीय शिक्षा नीति का ड्राफ्ट तैयार करेगी तथा राज्य सरकारों से इस पर सुझाव आमंत्रित करेगी। सरकार इस ड्राफ्ट को जनता के विचार जानने के लिये भी जारी करेगी। इस प्रकार एक वर्ष के भीतर ही नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति को अन्तिम रूप दे देगी।

**सुब्रामनियम समिति ने क्या सुझाव दिये हैं?**

समिति ने प्रतिवेदन दो भागों में दिया है। प्रथम वॉल्यूम जिसमें 230 पेज है, में 90 सुझाव दिये गये हैं। द्वितीय 100 पेज के वॉल्यूम में अनैक्चर के रूप है। समिति ने अनेक महत्त्वपूर्ण सुझाव दिये हैं, जैसे कि शिक्षा के अधिकार अधिनियम में संशोधन कर पाँचवीं कक्षा के पश्चात् सीखने के स्तर में कमी के कारण छात्र को रोकने का प्रावधान, अल्पसंख्यक स्कूलों में भी अन्य स्कूलों की भाँति आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के छात्रों के लिये कुल प्रवेश 25 प्रतिशत आरक्षित करने का प्रावधान, समिति ने शिक्षा के परिसरों में राजनीति के प्रवेश पर रोक लगाने, प्री-प्राइमरी शिक्षा को शिक्षा के अधिकार में शामिल करने, मध्याह्न भोजन योजना का विस्तार सैकेण्डरी स्कूलों तक करने के सुझाव दिये हैं। समिति ने महत्त्वपूर्ण नियुक्तियों विशेषकर कुलपतियों की नियुक्तियों में सरकारी हस्तक्षेप पर नाराजगी प्रकट की है। ❑

---

## शैक्षिक महासंघ की पहल पर

# मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा शिक्षक हित में निर्णय

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ का प्रतिनिधिमंडल माननीया मानव संसाधन विकास मंत्री श्रीमती स्मृति जुबिन इरानी से मंत्रालय के अफसरों और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के अध्यक्ष की उपस्तिथि में मिला था और निम्नलिखित मुद्दों और कई और शिक्षक हित से जुड़े मुद्दों पर विशद चर्चा हुयी थी। इस प्रतिनिधि मंडल में श्री महेंद्र कपूर (संगठन मंत्री), प्रो. प्रग्नेश शाह (सचिव), प्रो. ए.पी. कुलकर्णी, प्रो. बी. सत्यनारायण और डॉ. अनुराग मिश्रा (संयोजक, दिल्ली प्रान्त) शामिल थे। इस चर्चा के मुख्य बिंदु निम्नलिखित हैं –

1. किसी भी एडहॉक शिक्षक को API - PBAS और वर्कलोड के कारण नौकरी से नहीं निकाला जायेगा। यद्यपि यूजीसी रेगुलेशंस 2010 के तीसरे संशोधन के बाद यह खतरा हजारों शिक्षकों के ऊपर छा गया था, इसलिए इस चर्चा के बाद यह निर्णय किया गया कि टुटोरिअल और प्रैक्टिकल को शिक्षकों के वर्कलोड में ही शामिल किया जायेगा।

2. छात्रों द्वारा शिक्षकों के फीडबैक के मुद्दे पर यह निर्णय किया गया कि यह शिक्षकों के प्रमोशन के साथ नहीं जोड़ा जायेगा।

3. यू जी सी द्वारा जर्नल्स के निर्धारण के विषय में यह निर्णय किया गया था कि जर्नल्स के विषय विश्वविद्यालय पर ही छोड़ दिया जाये। जो सूची विश्वविद्यालय यू जी सी को भेजेगा उसे एक स्टैंडिंग समिति 60 दिन की निश्चित अवधी में जारी करेगी। इस प्रकार शिक्षकों को किन किन विषयों के जर्नल्स में अपने लेख छापने हैं, इसका निर्णय विश्वविद्यालय के हाथ में ही रहेगा।

4. इसके अलावा जून 2013 में यूजीसी रेगुलेशंस 2010 में किये गए दूसरे संशोधन और इसके द्वारा लागू की गयी कैपिंग को भी 2013 से हटा दिया जायेगा। इससे हजारों शिक्षकों को जो 2013 से 2016 के बीच नियुक्त हुए हैं, उन्हें अपने प्रमोशन में एक बड़ा रिलीफ मिलेगा।

16 जून 2016 को यू.जी.सी. की 516 वीं मीटिंग में यह सभी निर्णय अनुमोदित कर दिए गए। गजट नोटिफिकेशन में अभी समय लग सकता है पर कल सायं मंत्रालय के सचिव श्री विनय शील ओबेरॉय ने एक बयान जारी कर के यह स्पष्ट कर दिया है की मंत्रालय और यू जी सी को उपरोक्त सभी निर्णय स्वीकार हैं।

अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ इस नई स्थिति का स्वागत करता है और माननीया मंत्री श्रीमती स्मृति ईरानी का हार्दिक धन्यवाद करता है कि उन्होंने अपने प्रभाव को शिक्षकों के हित में इस्तेमाल कर के मंत्रालय और यू जी सी के अधिकारीयों को यह मांगे मानने के लिए कहा और शिक्षकों का भला किया। महासंघ भविष्य में भी मंत्रालय से सहयोग की अपेक्षा रखता है और शिक्षा और शिक्षकों के हित में कार्य करने के लिए सर्वथा तैयार है।

# How to make a good teacher

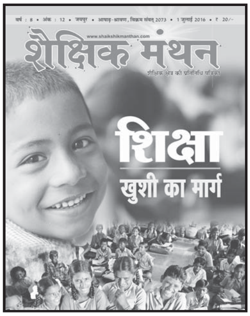


**Big changes are needed in schools, too, to ensure that teachers improve throughout their careers. Instructors in the best ones hone their craft through observation and coaching. They accept critical feedback—which their unions should not resist, but welcome as only proper for people doing such an important job. The best head teachers hold novices' hands by, say, giving them high-quality lesson plans and arranging for more experienced teachers to cover for them when they need time for further study and practice.**

Forget smart uniforms and small classes. The secret to stellar grades and thriving students is teachers. One American study found that in a single year's teaching the top 10% of teachers impart three times as much learning to their pupils as the worst 10% do. Another suggests that, if black pupils were taught by the best quarter of teachers, the gap between their achievement and that of white pupils would disappear.

But efforts to ensure that every teacher can teach are hobbled by the tenacious myth that good teachers are born, not made. Classroom heroes like Robin Williams in "Dead Poets Society" or Michelle Pfeiffer in "Dangerous Minds" are endowed with exceptional, innate inspirational powers. Government policies, which often start from the same assumption, seek to raise teaching standards by attracting high-flying graduates to join the profession and prodding bad teachers to leave. Teachers' unions, meanwhile, insist that if only their members were set free from central diktat, excellence would follow.

The premise that teaching ability is something you either have or don't is mistaken. A new breed of teacher-trainers is founding a rigorous science of pedagogy. The aim is to make ordinary teachers great, just as sports coaches help athletes of all abilities to improve their personal best (see article). Done right, this will revolutionise schools and change lives.

**Quis docebit ipsos doctores?**

Education has a history of lurching from one miracle solution to the next. The best of them even do some good. Teach for America, and the dozens of organisations it has inspired in other countries, have brought ambitious, energetic new graduates into the profession. And dismissing teachers for bad performance has boosted results in Washington, DC, and elsewhere. But each approach has its limits. Teaching is a mass profession: it cannot grab all the top graduates, year after year. When poor teachers are fired, new ones are needed—and they will have been trained in the very same system that failed to make fine teachers out of their predecessors.

By contrast, the idea of improving the average teacher could revolutionise the entire profession. Around the world, few teachers are well enough prepared before being let loose on children. In poor countries many get little training of any kind. A recent report found 31 countries in which more than a quarter of primary-school teachers had not reached (minimal) national standards. In rich countries the problem is more subtle. Teachers qualify following a long, specialised course. This will often involve airy discussions of theory—on ecopedagogy, possibly, or conscientisation (don't ask). Some of these courses, including masters degrees in education, have no effect on how well their graduates' pupils end up being taught.

What teachers fail to learn in universities and teacher-training colleges they rarely pick up on the job. They become better teachers in their first few years as they get to grips with real pupils in real classrooms, but after that improvements tail off. This is largely because schools neglect their most important pupils: teachers themselves. Across the OECD club of mostly rich countries, two-fifths of teachers say they have never had a chance to learn by sitting in on another teacher's lessons; nor have they been

asked to give feedback on their peers.

**Those who can, learn**

If this is to change, teachers need to learn how to impart knowledge and prepare young minds to receive and retain it. Good teachers set clear goals, enforce high standards of behaviour and manage their lesson time wisely. They use tried-and-tested instructional techniques to ensure that all the brains are working all of the time, for example asking questions in the classroom with "cold calling" rather than relying on the same eager pupils to put up their hands.

Instilling these techniques is easier said than done. With teaching as with other complex skills, the route to mastery is not abstruse theory but intense, guided practice grounded in subject-matter knowledge and pedagogical methods. Trainees should spend more time in the classroom. The places where pupils do best, for example Finland, Singapore and Shanghai, put novice teachers through a demanding apprenticeship. In America high-performing charter schools teach trainees in the classroom and bring them on with coaching and feedback.

**Do shorter hours or higher wages make better teachers?**

Teacher-training institutions need to be more rigorous—rather as a century ago medical schools raised the calibre of doctors by introducing systematic curriculums and providing clinical experience. It is essential that teacher-training colleges start to collect and publish data on how their graduates perform in the classroom. Courses that produce teachers who go on to do little or nothing to improve their pupils' learning should not receive subsidies or see their graduates become teachers. They would then have to improve to survive.

Big changes are needed in schools, too, to ensure that teachers improve throughout their careers. Instructors in the best ones hone their craft through observation and coaching. They accept critical feedback—which their unions should not resist, but welcome as only proper for people doing such an important job. The best head teachers hold novices' hands by, say, giving them high-quality lesson plans and arranging for more experienced teachers to cover for them when they need time for further study and practice.

Money is less important than you might think. Teachers in top-of-the-class Finland, for example, earn about the OECD average. But ensuring that the best stay in the classroom will probably, in most places, mean paying more. People who thrive in front of pupils should not have to become managers to earn a pay rise. And more flexibility on salaries would make it easier to attract the best teachers to the worst schools.

Improving the quality of the average teacher would raise the profession's prestige, setting up a virtuous cycle in which more talented graduates clamoured to join it. But the biggest gains will come from preparing new teachers better, and upgrading the ones already in classrooms. The lesson is clear; it now just needs to be taught. ❑

# Rebuilding The University

❑ **Niti Bhutani**

Thousands of professors have taken to the streets, putting aside their ideological differences, to protest against the bizarre service guidelines laid down in the UGC (University Grants Commission) Gazette Notification of 2016, the third amendment in only six years. The main issues concern their workload and promotions. While the workload issue seems to have been resolved in the recent full commission meeting of the UGC, the official notification is still awaited.

Promotions in universities are now made on the basis of a performance-based appraisal system (PBAS) wherein the tasks of professors are broken down into quantifiable indicators and points are assigned for each. There are three broad categories under which one is assessed: One, teaching, learning, and evaluation; two, co-curricular activities; and three, research. While there are some advantages to this system, it has been poorly thought out in that the emphasis is on quantity and not quality.

One also needs to look at the timeline of these amendments. The first set of promotion guidelines was issued by the UGC in 2010 and, defying all logic, was made effective retrospectively from 2008. The professors who became eligible for promotion between 2008-10 and whose interviews were held in time during this period got promoted under the old Merit Promotion Scheme, but those whose interviews got delayed beyond 2010 (and this is quite common in government organisations) will now be required to apply under the new, significantly stricter PBAS. This raises two questions: One, how can candidates who qualify for promotion at the same time be subject to two different sets of rules? Two, how can any reasonable government expect a candidate to change his portfolio based on its whimsical fancies? The latest amendment has only created further uncertainty as it changes the rules of the game yet again.

Clearly, policymakers lack an understanding of the profession. Every aspect of a teacher's job is not contractible. The care and attention a teacher gives is not quantifiable but matters a great deal in how we nurture young minds. When some aspects of performance are not measurable, the employee is bound to shift his attention away from these tasks to those that can be measured and rewarded. Also, note that earning points greater than the required minimum does not translate into a higher salary!

Our goal is to build strong and internationally competitive institutions of higher education. But we don't even have the basic infrastructure to support teaching and research. Undergraduate professors sit in a common staff-room and have no designated office space that is available even to a graduate student in the West. Having a teaching or research assistant, which is a given in high ranking universities, is something one can't even dream about here. Research grants are almost always released years after a project is completed. Can world-class research (or any class of research) be expected in this scenario?

The nature of a job at the undergraduate level, at least in Delhi University, is more teaching driven and very different from that at the ➔

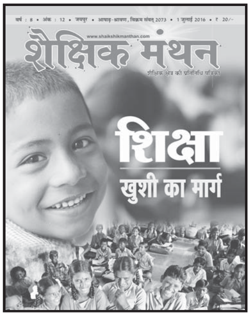


**Our goal is to build strong and internationally competitive institutions of higher education. But we don't even have the basic infrastructure to support teaching and research. Undergraduate professors sit in a common staff-room and have no designated office space that is available even to a graduate student in the West. Having a teaching or research assistant, which is a given in high ranking universities, is something one can't even dream about here. Research grants are almost always released years after a project is completed. Can world-class research (or any class of research) be expected in this scenario?**

## Akhil Bhartiya Rashtriya Shaikshik Mahasangh Recommended Some

# Amendments in U G C Regulation 2010

The Akhil Bhartiya Rastriya Shaikshik Mahasangh (ABRSM) is a teachers' organization with nationwide presence. ABRSM strives to strengthen the interaction between the teaching community and society. We work on the motto "Rashtra Ke Hit Me Shiksha, Shiksha Ke Hit Me Shikshak, Shikshak Ke Hit Me Samaj". ABRSM have four wings for Primary, Secondary, Higher Education and a separate Women's wing.

The higher education wing has been perturbed by the current developments in the form of amendments carried out in UGC regulation 2010 as they are not rational and can seriously damage the situation of higher education in the country. We unequivocally demand immediate suspension of these amendments and request for discussion between MHRD, UGC and ABRSM on June 6, 2016 for the following issues.

1. The amendments carried out in Section 3 and 4 and Appendix Ill relating to API / PBAS system is in contravention of Section 15 of the UGC Regulation 2010.
2. Any Ph.D degree awarded by a recognized university / institution in accordance with the then prevailing norms be considered at par with the Ph.D as per the Ph.D Regulation 2009 without any condition.
3. The 2nd amendment to the UGC Regulation 2010 related to API Capping be withdrawn with effect from notification date 13 June 2013.
4. The present system of API be reconsidered for suitable restructuring considering proficiency, skills and knowledge required at different stages of career by teacher as well as possible objective implementation as part of CAS and for direct recruitment as well.
5. The amendment to increase in the workload for university and college teachers at the cost of research and co-curricular activities is in contravention of Section 15 of the UGC Regulation 2010.
6. The ABRSM (Higher Education Wing) demands restoration of 14/14/16 hours per week workload respectively for Professors / Associate Professors / Assistant Professors without modifying number of hours for practical / tutorials/ preceptorials.
7. The student's feedback as part of teacher's performance evaluation, as proposed in the 3d amendment notification needs to be reconsidered in its entirety.
8. The filling of all vacant positions through regular appointments in place .of ad-hoc / temporary / part time / contractual teachers be expedited as soon as possible in a time bound manner.
9. The ABRSM (Higher Education Wing) demands UGC to resolve all anomalies arisen out of implementation of sixth pay recommendations.
10. The five year tenure appointment of Principals is irrational and the ABRSM (Higher Education Wing) reiterates its demand to reconsider this matter seriously.
11. In present era of restructuring and development economy with special skills and knowledge, Government of India shall increase financial assistance to present programs as well as promote new educational programs in grant in aid institutions / Universities/ Colleges. We strongly protest and condemn promotion of self-finance system at any government as well as grant in aid institutions/Universities /Colleges.
12. We demand immediate announcement of Vllth Pay review committee for the teachers of Universities / Colleges.

---

➔ postgraduate level. In particular, the emphasis is more on categories like teaching, learning, and evaluation than research. In the US, there is a clear distinction between a teaching position and a research position. In all this, good teaching is being compromised.

Higher education needs clear, original thinking on the part of policymakers and involvement of stakeholders, budgetary issues and GATS considerations notwithstanding. We must strengthen our well-established institutions of higher learning by providing at least a basic research environment. Promotions can be based on both objective and subjective criteria without solely playing "points". Strong and healthy institutions must be in place to retain our good faculty and encourage new talent into the profession. ❑

(Prof. at D.U.)

# भारत के आठ विश्वविद्यालय एशिया के सर्वोच्च 100 विश्वविद्यालयों में शामिल

**भारत ने 2016 की टाइम्स उच्च शिक्षा एशिया के विश्वविद्यालयों की रैंकिंग में अब तक का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन किया है। एशिया के सर्वोच्च 200 विश्वविद्यालयों में भारत के 16 विश्वविद्यालय, सांइस को 27 वाँ स्थान प्राप्त हुआ है।**

भारत ने टाइम्स द्वारा जारी एशिया के दो सौ विश्वविद्यालयों की रैंकिंग 2016 में अब तक का विद्यालयों की सूची में भारत के आठ विश्वविद्यालयों को स्थान मिला है, जबकि 2013 की सूची में मात्र 3 संस्थानों को बढ़ाया गया है। 200 की सूची में भारत के 16 विश्वविद्यालयों ने स्थान पाया है। यह भी पहली बार है कि सर्वोच्च 30 विश्वविद्यालयों की सूची में इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ सांइस ने 27 वाँ स्थान प्राप्त कर प्रवेश किया है। अन्य प्रथम 100 विश्वविद्यालयों की सूची में आई.आई.टी. मुम्बई (43 वाँ स्थान) आईआईटी खड़गपुर (51 वाँ स्थान), आईआईटी दिल्ली (60 वाँ स्थान) आईआईटी मद्रास (62 वाँ स्थान) आईआईटी रुड़की (65 वाँ स्थान) आईआईटी गोहाटी (80 वाँ संयुक्त स्थान) व जादवपुर विश्वविद्यालय (84 वाँ संयुक्त स्थान) ने स्थान पाया है।

आईआईटी बम्बई के निदेशक श्री देवांग खाखर ने कहा है कि यह परिवर्तन पहले अच्छी शोध प्रोफाइल व आवश्यक सूचनाओं को अधिक व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने के कारण हुआ है। उन्होंने कहा कि भारत अब अपवार्ड ट्रेजेक्टरी की अवस्था में आ चुका है व हम सभी आगे इससे भी अच्छे परिणाम देने में समर्थ होंगे। के पीएमजी में शिक्षा व कौशल विकास के प्रमुख श्रीनारायण रामास्वामी ने उक्त विचार से सहमति व्यक्त करते हुये कहा कि भारत के उच्च शिक्षण संस्थानों ने अब यह मान लिया है कि वैश्विक रैंकिंग की व्यवस्था लम्बे समय तक चलने वाली है अब भारतीय उच्च शिक्षण संस्थान सूचना सम्पत्ति व आयोजना व्यवस्था को अग्रिम रूप से आपस संप्रेषित करने में लगे हैं। ये सभी अब रैंकिंग की व्यवस्था के विशिष्ट पक्षों की गहराई को समझने लगे हैं और उनके अनुसार ही कार्य करने लगे हैं। यह अभी शुरूआत मात्र है। हमारे उच्च शिक्षण संस्थान आधारभूत रूप में सुदृढ़ हैं। वास्तव में इन संस्थानों वैश्विक स्तर पर उच्च रैंकिंग अधिक ऊपर आने के प्रयास करने चाहिये। आधारभूत से सुदृढ़ होने के बावजूद श्री खाखर का मानना है कि हमें अभी बहुत कुछ करना है।

श्री खाखर के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय रैंकिंग में ऊँचा स्थान प्राप्त करने के लिये आवश्यक है कि रैंकिंग के पैरामीटर्स पर अधिक ध्यान दिया जाय। इस हेतु उच्च शिक्षा व्यवस्था में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर विद्यार्थियों व शिक्षकों को बढ़ाना होगा। आईआईटी ने सिंगापुर, यूएेई, इथोपिया व सार्क सदस्य देशों में आईआईटी की प्रवेश परीक्षा अगले वर्ष से कराने का निर्णय किया है। इससे विदेशी विद्यार्थियों को स्नातक व स्नातकोत्तर पाठ्यक्रमों में प्रवेश का अवसर मिल सकेगा। टाइम्स की उच्च रैंकिंग के सम्पादक फिल बैटी का मत है कि रैंकिंग में कमजोर राष्ट्रों को एशिया के ही शैक्षिक दृष्टि बहुत आगे के राष्ट्रों यथा चीन, जापान व साउथ कोरिया के विश्वविद्यालयों से बहुत कड़ी प्रतियोगिता करने के लिये बहुत कुछ करना होगा। श्री बैटी ने इस दिशा में उठाये गये कतिपय सकारात्मक कदमों का उल्लेख करते हुये कहा है कि भारत सरकार ने वैश्विक स्तर पर भारतीय विश्वविद्यालयों को प्रतिस्पर्द्धी बनाने के लिये हाल ही अनेक कदम उठाये हैं, जो कि शैक्षिक दृष्टि सकारात्मक समाचार है। भारत सरकार ने हाल ही हमें सार्वजनिक व निजी शिक्षण संस्थानों व स्पेशल रिपोर्ट में सहायता देने का निर्णय किया है, जिससे कि वे अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिस्पर्द्धी बन सके।

टाइम्स की रैंकिंग सूची में नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ सिंगापुर ने प्रथम नैनयाग टेक्नोलोजीकल विश्वविद्यालय ने दूसरा स्थान प्राप्त किया है। यह प्रथम अवसर है कि सिंगापुर के विश्वविद्यालयों ने प्रथम दो सर्वोच्च स्थान प्राप्त किये हैं। रैंकिंग में पेकिंग विश्वविद्यालय (चीन) ने संयुक्त रूप से दूसरा स्थान प्राप्त किया है। यूनिवर्सिटी ऑफ हाँगकाँग ने चौथा व चीन के सिंग्वुवा यूनिवर्सिटी ने पाँचवा स्थान प्राप्त किया है। इस बार टाइम्स की रैंकिंग में 22 देशों का प्रतिनिधित्व हुआ है, जबकि पिछली बार 14 ही देश सम्मिलित थे। इसीलिये इस बार रैंकिंग सूची का विस्तार 200 विश्वविद्यालयों तक किया गया है। टाइम्स उच्च शिक्षा एशिया रैंकिंग ने इस क्षेत्र से अधिकाधिक संस्थानों जिनमें भारत के अतिरिक्त पाकिस्तान व बांग्लादेश को शामिल करने का प्रयास रहा है, उन्हें मान्यता मिली है।❑

# तीसरी पास करने से पहले पढ़ाई छोड़ देते हैं 60 प्रतिशत छात्र

शिक्षा का अधिकार कानून और सरकार के तमाम प्रयासों के बावजूद छह से 13 वर्ष आयु वर्ग के 60 प्रतिशत छात्र तीसरी कक्षा पास करने से पहले ही पढ़ाई छोड़ देते हैं। बच्चों के लिए काम करने वाली संयुक्त राष्ट्र की संस्था यूनीसेफ ने जारी रिपोर्ट में यह बात कही। भारत में यूनिसेफ के प्रतिनिधि लूई जॉर्ज आर्सेनल ने रिपोर्ट जारी करते हुए कहा कि सर्व शिक्षा अभियान और वर्ष 2009 में शिक्षा का अधिकार कानून आने से देश में शिक्षा की स्थिति में काफी परिवर्तन आया है। छह से 13 साल की उम्र के स्कूल नहीं जाने वाले छात्रों की संख्या वर्ष 2009 के 80 लाख से घटकर छह लाख रह गई है। लेकिन अभी भी काफी चुनौतियाँ मौजूद हैं।

श्री आर्सेनल ने बताया कि स्कूलों में प्रवेश लेने वालों में से 60 प्रतिशत छात्र तीसरी कक्षा पास करने से पहले ही स्कूल छोड़ देते हैं। उन्होंने कहा कि यूनिसेफ ने सरकार से नई शिक्षा नीति में प्री-स्कूल शिक्षा को शामिल करने तथा आठवीं की बजाय दसवीं तक निर्बाध शिक्षा का प्रावधान करने की सिफारिश की है।

कार्यक्रम में मौजूद शिक्षा सचिव एस.के. खुंटिया ने कहा कि प्री-स्कूल संबंधी सिफारिश महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने कहा कि नई शिक्षा नीति में यूनिसेफ की दोनों सिफारिशों को जगह मिल सकती है। नई शिक्षा नीति के लिए गठित समिति ने सरकार को अपनी रिपोर्ट सौंप दी है। उन्होंने कहा कि बच्चे देश का भविष्य हैं और शिक्षा भेद मिटाने में बहुत बड़ा योगदान देता है।

श्री खुंटिया ने बताया कि सर्वशिक्षा अभियान के तहत सरकार ने विशेष फोकस की जरूरत वाले जिलों की पहचान की है और इन जिलों में अभियान के कुल खर्च का 49 प्रतिशत व्यय किया जा रहा है। शिक्षा में लैंगिक असमानता दूर करने की दिशा में अभी भी काफी दूरी तय करनी है।

देश में अल्पसंख्यक समुदायों में इस आयु वर्ग के बौद्ध एवं नवबौद्ध समुदायों के 18.2 प्रतिशत, जैन समुदाय के 12.4 प्रतिशत, सिख समुदाय के 23.3 प्रतिशत, ईसाई समुदाय के 25.6 प्रतिशत तथा मुस्लिम समुदाय के 34 प्रतिशत बच्चे प्री-स्कूल शिक्षा से वंचित हैं। वहीं, हिन्दू परिवार के भी 25.9 प्रतिशत बच्चे प्री-स्कूल शिक्षा नहीं पाते। सामाजिक समूहों और आर्थिक सूचकांक के आधार पर बताया गया है कि प्री-स्कूल के लिए बच्चों को आंगनबाड़ी भेजने में अनुसूचित जनजाति तथा निर्धनतम परिवार सबसे आगे हैं। अनुसूचित जनजाति के 52 प्रतिशत बच्चे आंगनबाड़ी जाते हैं जबकि 26.9 प्रतिशत स्कूल पूर्व शिक्षा से वंचित रह जाते हैं। निर्धनतम परिवारों के 51.9 प्रतिशत बच्चे आंगनबाड़ी जाते हैं तथा 34.9 प्रतिशत इस तरह की शिक्षा पाते ही नहीं। अनुसूचित जाति के 29.4 प्रतिशत, अन्य पिछड़ा वर्ग के 28.3 प्रतिशत तथा अन्य सामाजिक समूहों के 23.6 प्रतिशत बच्चे स्कूल पूर्व शिक्षा नहीं पाते। वहीं आश्चर्य की बात यह है कि सबसे अमीर वर्ग के भी 20.3 प्रतिशत छात्र प्री-स्कूल शिक्षा से वंचित है। हालाँकि, निजी प्री-स्कूलों में जाने वालों में इनका प्रतिशत सर्वाधिक (61.6 प्रतिशत) है।

श्री आर्सेनल ने कहा कि शिक्षा की गुणवत्ता सुनिश्चित करना तथा सीमांत वर्ग तक इसे पहुँचाना दो बड़ी चुनौतियाँ हैं। उन्होंने कहा कि स्कूल छोड़ने वाले छात्रों की संख्या कम करने के लिए जरूरी है कि प्राथमिक कक्षाओं का पाठ्यक्रम ऐसा हो जिसे छात्र आसानी से सीख सकें। शिक्षा रोमांचक और क्रियाकलाप आधारित हो और शिक्षकों को भी इस तरह से पढ़ाने के लिए तैयार किया जाए। दिल्ली स्थित अंबेडकर विश्वविद्यालय के कुलपति श्याम मेनन ने कहा कि पहले जहाँ शिक्षा के मामले में असमानता स्कूल जाने और नहीं जाने वालों के बीच थी, वहीं आज स्कूल के स्तर तथा शिक्षा की गुणवत्ता भी असमानता का कारण है। कौन बच्चा किस स्कूल में जाते हैं इस पर भी काफी हद तक शिक्षा में तथा कॅरियर में उसके भविष्य के बारे में बताया जा सकता है, क्योंकि आमतौर पर इसका संबंध उसके परिवार की आर्थिक स्थिति से भी है। रिपोर्ट में कहा गया है कि दुनियाभर में 12 करोड़ 40 लाख बच्चे या तो स्कूल का मुँह ही नहीं देखते या अपनी पढ़ाई पूरी नहीं कर पाते। 14 साल से कम उम्र के 15 करोड़ बच्चे बाल श्रम करने के लिए मजबूर हैं। इसके अनुसार वर्ष 2015 के अंत तक युद्ध तथा हिंसा के कारण छह करोड़ लोग शरणार्थी के तौर पर अपने घरों से दूर रह जाते हैं जिनमें आधे बच्चे हैं। कुपोषण को बहुत बड़ी चिंता बताते हुये कहा गया है कि वर्ष 2030 तक कुपोषण के कारण सात करोड़ बच्चे पाँच साल की उम्र से पहले ही दम तोड़ देंगे। ❑

## सातवें वेतन आयोग की अनुशंषायें स्वीकार

# 47 लाख कर्मचारी व 53 लाख पैंशनर्स को लाभ

भारत सरकार ने जस्टिस ए.के. माथुर की अध्यक्षता में गठित 7वें वेतन आयोग की सिफारिशों को मोटे तौर पर स्वीकार करते हुये 47 लाख केन्द्रीय कर्मचारियों व 53 लाख पैंशनर्स के लिये 1 जनवरी 2016 से लागू करने का निर्णय किया है। इन सिफारिशों को लागू करने पर 1.02 लाख करोड़ का व्यय भार आने की संभावना है। इन वेतनमानों का लाभ 1 जुलाई 2016 से नकद देय होगा अर्थात अगस्त माह का वेतन, नये वेतनमान में दिया जायेगा। जनवरी से जून 2016 का बढ़े वेतन का बकाया इसी वित्त वर्ष में चुका दिया जायेगा। भत्तों से संबंधित सिफारिशों पर अभी निर्णय नहीं किया गया है। इसके अध्ययन के लिये एक चार सदस्यीय समिति का गठन वित्त सचिव की अध्यक्षता में किया गया है। समिति चार माह में अपनी रिपोर्ट देगी। भत्तों का अभी की दरों पर भुगतान जारी रहेगा और वे आगे की तिथि से संशोधित किये जायेंगे। उल्लेखनीय है कि वेतन आयोग ने अनेक भत्तों को समाप्त करने तथा कुछ का अन्य भत्तों में विलय का सुझाव दिया है।

नये वेतनमानों में संशोधनों के अन्तर्गत न्यूनतम वेतन 7 हजार से बढ़ाकर 18000 किया गया है। अधिकतम पर केबिनेट सचिव का वेतन 90 हजार से 2.5 लाख करने, सचिवों का 1.75 लाख से 2.25 लाख करने, प्रथम श्रेणी के अधिकारियों का वेतन 45990 से 56100 रुपये करने का निर्णय किया है। इसी प्रकार 13500 पाने वाले का नया वेतन 40500, 21000 पाने वाले का वेतन 63000, 46100 पाने वाले का वेतन 1,38,300 रुपये तथा 80000 पाने वाले का वेतन 2.2 लाख रुपये व 90 हजार पाने वाले का वेतन 2.5 लाख रुपये हो जायेगा। मोटे पर अनुमानतः मूल वेतन को 2.57 के गुणक से बढ़ाने लगभग नया वेतन प्राप्त हो जायेगा। निर्णय के अनुसार कर्मचारियों के वेतन में 15 प्रतिशत व भत्तों सहित 23.55 प्रतिशत की वृद्धि होगी। पैंशनर्स की पैंशन में 24 प्रतिशत बढ़ोतरी होगी। जनवरी से मार्च 2016 के बकाया भुगतान की राशि 12133 करोड़ रुपये आयेगी। सरकार पर तत्काल 84033 करोड़ का भार पड़ने की संभावना है। ग्रेच्युटी के भुगतान की सीमा 10 लाख से बढ़ाकर 20 लाख कर दी गई है। पे बैंड व पे ग्रेड की व्यवस्था समाप्त कर एक साधारण पे-मैट्रिक्स की व्यवस्था की गई है। वार्षिक वेतन की वृद्धि राशि 3 प्रतिशत निश्चित की गई है जो 1 जनवरी व 1 जुलाई से दी जायेगी। स्मरणीय है कि वर्तमान में वेतन वृद्धि 3 प्रतिशत जुलाई में ही देय होती है। मँहगाई भत्ते की दर भी 3 प्रतिशत ही रहेगी। बीमा योजना के अन्तर्गत प्रत्येक कर्मचारी से 1500 से 5000 रुपये तक की कटौती के प्रस्ताव को सरकार ने स्वीकार नहीं किया है।

एक ओर सरकार ने इस वेतन वृद्धि को ऐतिहासिक बताते हुये कहा कि अब सरकारी कर्मचारियों का वेतन निजी क्षेत्र की तुलना में अधिक हो जायेगा। सरकार की ओर से दावा किया गया है कि वर्तमान सरकार ने सबसे कम समय में वेतन आयोग की सिफारिशों पर निर्णय किया है जो कि ऐतिहासिक है। दूसरी ओर सरकारी कर्मचारियों के संगठनों ने इन्हें ठुकराते हुये 11 जुलाई से हड़ताल पर जाने की घोषणा की है। कर्मचारी संगठनों ने वेतन वृद्धि के लाभ को अपेक्षा से कम बताते हुये इसे अभी तक की सबसे कम वृद्धि बतलाया है। उन्होंने कहा है कि 'नैट टेक होम पे' (Net Take Home Pay) में प्रस्तावित कटौतियों व कट के पश्चात बहुत कम वृद्धि होगी। उन्होंने न्यूनतम वेतन 18000 से बढ़ाकर 26000 करने का आग्रह किया है।

सरकार ने कर्मचारियों को हड़ताल पर नहीं जाने की सलाह देते हुये कर्मचारियों के प्रतिनिधियों से वार्ता कर मार्ग निकालने का प्रयास किया है। मंत्री समूह का आग्रह है कि जो भी कमी रह गयी है, उन्हें वेतनमान विसंगति समिति के स्तर पर सुलझाया जा सकता है। कर्मचारी प्रतिनिधियों ने संगठनों की जुलाई में बैठक बुलाकर पुनर्विचार करने के लिये कहा है।

देश में माँग की कमी को दूर करने में ये सिफारिशें महत्त्वपूर्ण योग देंगी। इस वेतन वृद्धि से टिकाऊ उपभोग की वस्तुओं यथा वाहन, फ्रिज, मोबाइल इत्यादि तथा तत्काल उपभोग वस्तुओं की माँग में वृद्धि का अभाव है। बचतों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा जिससे ब्याज दर गिरेगी व निवेश का चक्र पुनः प्रारम्भ हो सकेगा। बढ़ी हुई बचतों, स्टॉक बाजार पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। भवन निर्माण की गतिविधियाँ भी बढ़ने का अनुमान है। परन्तु यह भी आशंका है कि सरकार का राजकोषीय घाटा बढ़ेगा जिससे राजकोषीय घाटे का 3.5 प्रतिशत तक सीमित रखने पर सरकार को कठिनाई आ सकती है। हालाँकि आशा है कि वेतनवृद्धि की कुल राशि का पाँचवाँ हिस्सा सरकार को पुनः बढ़ा कर राशि के रूप में वापस मिल जायेगा। मुद्रा प्रसार में वृद्धि की भी आशंका है। इसके लिये सरकार को कड़े उपाय करने होंगे।

## शैक्षिक मंथन संस्थान द्वारा 'कैसा हो पाठ्यक्रम' विषय पर जयपुर में व्याख्यान

# पाठयक्रम समयानुकूल व देशानुकूल हो

शैक्षिक मंथन संस्थान द्वारा 'कैसा हो पाठ्यक्रम' विषय पर एक व्याख्यान का आयोजन 3 जुलाई 2016 को सेंट विल्फ्रेड कॉलेज के सभागार में किया गया।

मुख्य वक्ता शैक्षिक प्रौद्योगिकी विभाग के अनुसंधान अधिकारी हनुमान सिंह राठौड़ ने बताया कि देश में दो प्रकार की विचार प्रणालियाँ चल रही हैं। एक प्राचीन राष्ट्र की सभ्यता संस्कृति और इतिहास से अनुराग रखने वाली, अपनों को इस देश की जड़ों से जोड़ने वाली राष्ट्रीय विचार प्रणाली, जो चाहती है कि आने वाली पीढ़ी श्रेष्ठ जीवन मूल्यों से युक्त तथा राष्ट्र भक्त बने। विचारों की दूसरी धारा सेकुलरता के आवरण में इस देश की प्रत्येक परम्परा को हेय, दकियानूसी, मिथक व पुरातनपंथी मानती है और पाश्चात्य भोगवादी व कम्युनिष्ट विचारधारा को आधुनिक मानती है।

शिक्षा व उसके पाठ्यक्रम के लिए प्रत्येक शिक्षा आयोग ने मूल्यपरक, राष्ट्रीय शिक्षा की सिफारिश की है, किन्तु क्रियान्वयन का अवसर आने पर अंतत अब तक सेकुलरता के नाम पर विकृत की जाती रही है। इसी प्रकार राष्ट्रवादी शक्तियों को जब अवसर मिलता है तो वे अपने देश की जड़ों को तलाशने, स्वाभिमान जागरण करने तथा विस्मृत जन-नायकों के स्मरण का पाठ्यक्रम में परिवर्तन कर, करने का प्रयत्न करते हैं। पाठ्यक्रम में परिवर्तन के संबंध में इन दोनों विचार पद्धतियों का द्वन्द्व चल रहा है। इसका कारण यह है कि भारत में केन्द्रीय व प्रान्त स्तर पर संवैधानिक अधिकार प्राप्त 'शिक्षा नियामक आयोग' नहीं है। अखिल भारतीय राष्ट्रीय महासंघ व अन्य राष्ट्रीय विचार के शैक्षिक संगठन लंबे समय से यह माँग कर रहे हैं। यह आयोग शिक्षाविदों से निर्मित हो और राजनैतिक हस्तक्षेप से मुक्त हो। इसमें समय-समय पर पाठ्यक्रमों की समीक्षा हो, लोग सुझाव दे सकें तथा समयानुकूल परिवर्तन हो सके।

परिवर्तन-परिवर्धन का आधार हमारे देश की सभ्यता एवं संस्कृति, हमारे जीवन मूल्य, राष्ट्र की वर्तमान आवश्यकता व आकाँक्षा होना चाहिए। विद्यार्थी का सर्वांगीण-शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक व आध्यात्मिक विकास सुनिश्चित कर राष्ट्र भक्त, सुयोग्य नागरिक बनाना ही पाठ्यक्रम का उद्देश्य होना चाहिए। जब हम स्वामी विवेकानंद के शब्दों में कहते हैं कि शिक्षित युवक 'अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए।' इसका तात्पर्य है कि वह पराश्रित, अंधानुकरण करने वाला नहीं होकर अपनी जड़ों के दृढ़ आधार पर सभी परिवर्तन स्वीकार करने वाला होना चाहिए। संसार में जहाँ भी, जो भी अच्छा तथा अपने देश के अनुकूल हो उसे स्वीकार करने वाला नागरिक शिक्षा के माध्यम से ही बनना चाहिए न कि आधुनिकता के नाम पर संसार का कचरा या गंदगी यहाँ लाने वाला। 'भारत तेरे टुकड़े होंगे, इशां अल्लाह इसां अल्लाह' के नारे लगाने वाला युवक यदि वर्तमान शिक्षा प्रणाली का उत्पाद है तो हमें समय रहते सचेत हो जाना चाहिए।

मुख्य अतिथि माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के अध्यक्ष डॉ. बी. एल. चौधरी ने कहा कि पाठ्यक्रम में शिक्षा ज्ञान देने वाली, सृजनात्मकता देने वाली होनी चाहिए। हमारी शिक्षा नवाचारों को प्रोत्साहित करे। पाठ्यक्रमों का दृष्टिकोण भारतीय होना चाहिए। पाठ्यक्रमों का उद्देश्य स्वावलम्बी बनाने वाली शिक्षा होनी चाहिए। शिक्षा चरित्र निर्माण एवं मानव निर्माण आधारित होनी चाहिए। शिक्षा में कौशल विकास का होना नितान्त आवश्यक है जिससे विद्यार्थी अपना जीवन चला सके।

कार्यक्रम के अध्यक्ष डॉ. विमल प्रसाद अग्रवाल ने बताया कि भावी पाठ्यक्रम में ऐसी विषय वस्तु दी जाए, जिससे बालकों में चरित्र निर्माण के साथ उत्तरदायी नागरिक बनने की भावना का विकास हो साथ ही कौशल विकास एवं ज्ञानार्जन से वो राष्ट्र का नाम ऊँचा कर सकें। पाठ्यक्रम में विद्यार्थी के मन में गर्व एवं गौरव का भाव जगे। ऐसी पाठ्य सामग्री का समावेश होना चाहिए। पाठ्यक्रम परिस्थिति एवं देश दशा के अनुरूप होना चाहिए। आभार प्रदर्शन शैक्षिक मंथन पत्रिका के सम्पादक प्रो. संतोष पाण्डेय ने किया। इस अवसर पर शैक्षिक मंथन संस्थान के सचिव महेन्द्र कपूर, उपाध्यक्ष प्रो. जे.पी. सिंघल, महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर के पूर्व कुलपति प्रो. पी. एल. चतुर्वेदी, जोधपुर विश्वविद्यालय के पूर्व कुलपति प्रो. लोकेश सिंह शेखावत, राजस्थान क्षेत्र सेवा प्रमुख शिवलहरी, जयपुर प्रान्त प्रचारक निम्बाराम, जयपुर के सह प्रांत प्रचारक डॉ. शैलेन्द्र जी सहित सैंकड़ों गणमान्य नागरिक उपस्थित रहे।

कार्यक्रम का संचालन भरत शर्मा ने एवं संयोजन बसन्त जिन्दल, डॉ. ओमप्रकाश पारीक, नोरंग सहाय, आलोक चतुर्वेदी ने किया। समाचार सम्पादन व प्रेषण मीडिया प्रभारी डॉ. योगेश गुप्ता ने किया।

# रुक्टा ( राष्ट्रीय ) की प्रदेश कार्यकारिणी बैठक सम्पन्न

रुक्टा (राष्ट्रीय) की विस्तृत प्रदेश कार्यकारिणी बैठक दिनांक 8-6-2016 को संगठन अध्यक्ष डॉ. दिग्विजयसिंह की अध्यक्षता में माहेश्वरी सेवा सदन, पुष्कर में सम्पन्न हुई। सर्वप्रथम महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता द्वारा गत बैठक की कार्यवाही विवरण को सदन के समक्ष रखा गया जिसे सर्वसम्मति से पारित किया गया। इसके बाद महामंत्री ने गत बैठक के पश्चात संगठन की गतिविधियों एवं उपलब्धियों की जानकारी देते हुए बताया कि इस अवधि में मुख्यमंत्री, मानव संसाधन विकास राज्य मंत्री, उच्च शिक्षा मंत्री सहित केबिनेट मंत्रीगण श्री गुलाबचन्द कटारिया, श्री अरुण चतुर्वेदी, श्री वासुदेव देवनानी, भाजपा अध्यक्ष श्री अशोक परनामी सहित अन्य विधायकों से भेंट कर शिक्षक समस्याओं विशेषकर पदनाम परिवर्तन को हल करने की मांग की गई। पदनाम परिवर्तन हेतु 4200 से अधिक शिक्षकों के हस्ताक्षर एवं 92 जनप्रतिनिधियों के समर्थन पत्र प्राप्त किये गये। कतिपय विश्वविद्यालयों में घटित देश विरोधी घटनाओं पर कार्यवाही करने हेतु 4000 से अधिक शिक्षकों के हस्ताक्षर, जनप्रदर्शन, गोष्ठियाँ आयोजित की गई। इसके अतिरिक्त अन्य शिक्षक समस्याओं यथा पे बेंड-4 में रिकवरी उस पर स्थगन, यू.जी.सी. रेगुलेशन के नवीन संशोधन का विरोध सहित अन्य लम्बित समस्याओं पर संगठन की गतिविधियों की जानकारी दी गई। इसके अतिरिक्त नव संवत्सर कार्यक्रम, अम्बेडकर जयंती एवं पाठ्यक्रम परिवर्तन को लेकर हुए कार्यक्रमों की जानकारी भी सदन के समक्ष रखी गई। बैठक के अगले चरण में सदस्यों ने लम्बित शिक्षक समस्याओं पर गहनता से विचार विमर्श कर सक्रिय कार्यवाही की योजना बनाई। सदन ने इस बात पर संतोष व्यक्त किया कि पदनाम परिवर्तन को लेकर संगठन की सक्रियता एवं दबाव के चलते फाइल फिर से ओपन हुई है। इसके बाद सत्र 2016-17 के लिए वार्षिक योजना को अन्तिम रूप दिया गया।

इसमें 1 जुलाई को अधिकतम सदस्यता, 15 जुलाई तक सम्पूर्ण सदस्यता, 19 जुलाई या इसके आस-पास गुरुवंदन कार्यक्रम, जुलाई-अगस्त माह में पौधा रोपण एवं देखभाल, अगस्त माह में कार्यकारिणी बैठक, सितम्बर-अक्टूबर में विभागश: शिक्षा की गुणवत्ता के विभिन्न आयामों पर गोष्ठी, नवम्बर में कार्यकारिणी बैठक, दिसम्बर-जनवरी में प्रदेश अधिवेशन, 12 जनवरी से 23 जनवरी के मध्य कर्तव्य बोध दिवस, फरवरी-मार्च में कार्यकारिणी बैठक, अप्रेल में नव संवत्सर तथा जून में विस्तृत कार्यकारिणी बैठक तय किये गये। कार्यकारिणी बैठक में संगठन के अधिवेशनों को स्ववित्तपोषी करने पर सर्वसम्मिति बनी। महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता ने सदस्यता अभियान की जानकारी देते हुए बताया कि इस वर्ष 15 जुलाई के पश्चात् रुक्टा (राष्ट्रीय) की वार्षिक सदस्यता नहीं ली जानी है तथा सदस्यता की राशि प्रति सदस्य 100 रु के हिसाब से केन्द्र को भेजी जानी है। कार्यकारिणी के निर्णयानुसार इस वर्ष से इकाई का अंश इकाई में नहीं रखते हुए इकाई में हुए खर्चों के वाऊचर प्रस्तुत किये जाने पर प्रति सदस्य 20 रु. तक की राशि का पुर्नभरण केन्द्र द्वारा किया जा सकेगा। कार्यकारिणी बैठक में अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर ने संबोधित करते हुए महासंघ के प्रतिनिधि मंडल की यू.जी.सी. अध्यक्ष एवं मानव संसाधन विकास मंत्री से विभिन्न शिक्षक समस्याओं एवं यू.जी.सी. रेगुलेशन में हुए नवीन संशोधन पर आपत्तियों को लेकर हुई विस्तृत भेंट की जानकारी दी। श्री महेन्द्र कपूर ने बताया कि श्रीमती स्मृति इरानी ने संगठन की अधिकांश मांगों पर सकारात्मक रुख रखते हुए अपेक्षित कार्यवाही करने के निर्देश सक्षम अधिकारियों को दे दिये हैं। उन्होंने शिक्षक प्रशिक्षण, परीक्षा सुधार, केम्पस सुधार जैसी गुणवत्ता से जुड़े विषयों पर गोष्ठी आयोजित करने हेतु शैक्षिक मंथन संस्थान के पूर्ण सहयोग का भरोसा दिलाया। अध्यक्षीय उद्‌बोधन देते हुए डॉ. दिग्विजयसिंह ने वैचारिक अधिष्ठान के आलोक में कार्यकर्ताओं को समर्पण भाव कार्य करने का आह्वान किया। अंत में गत बैठक के पश्चात प्रभुतत्त्व में लीन शिक्षक साथियों को श्रद्धांजलि देते हुए उनकी आत्मा की शांति के लिए दो मिनट का मौन रख प्रार्थना की गई। सामूहिक कल्याण मंत्र के साथ बैठक सम्पन्न हुई।

## राजस्थान कॉलेज शिक्षा में पे बेंड-4 में आगामी वेतन वृद्धि हेतु 6 माह की सेवा की आवश्यकता का आदेश वापस

29 जनवरी, 2016 को मुख्य लेखाधिकारी आयुक्तालय कॉलेज शिक्षा, जयपुर (राज.) ने एक पत्र जारी कर पे बैंड 4 में आगामी वार्षिक वेतनवृद्धि हेतु 1 जुलाई से 6 माह की न्यूनतम सेवा की आवश्यकता का आदेश जारी किया था। रुक्टा (राष्ट्रीय) ने सक्षम अधिकारियों अनुमोदन लिए बिना एवं नियमों की गलत व्याख्या कर अगली वेतनवृद्धि के लिए 6 माह की शर्त लगाने के इस आदेश का पुरजोर विरोध किया। रुक्टा (राष्ट्रीय) के लगातार प्रयासों से उक्त प्रकरण में रिकवरी पर स्थगन आदेश जारी कर फाइल को वित्त विभाग भेजा गया। संगठन द्वारा दिए गए तथ्यों एवं तर्कों से सहमत होकर वित्त विभाग ने उक्त 6 माह की सेवा प्रावधान को गलत मान लिया है। वित्त विभाग की आई.डी. 10160957 के आधार पर आयुक्त कॉलेज शिक्षा ने दिनांक 21-6-2016 को संशोधन जारी कर उक्त आदेश को निष्प्रभावी कर दिया है। शिक्षक हित में रुक्टा (राष्ट्रीय) की यह एक और महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

गतिविधि

# रुक्टा ( राष्ट्रीय ) का प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग सम्पन्न

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) का दो दिवसीय प्रदेश कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग 9 व 10 जून 2016 को संगठन अध्यक्ष डॉ. दिग्विजयसिंह की अध्यक्षता में माहेश्वरी सेवा सदन पुष्कर (अजमेर) में सम्पन्न हुआ। कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग के प्रथम सत्र में कार्यकर्ताओं का विभागश: परिचय हुआ। इस सत्र में प्रदेश संगठन मंत्री डॉ. ग्यारसीलाल जाट ने अभ्यास वर्ग के महत्त्व को बताते हुए समय एवं कार्यकर्ता नियोजन की महत्ता पर प्रकाश डाला। द्वितीय सत्र में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के राजस्थान क्षेत्र कार्यवाह श्री हनुमानसिंह का पाथेय प्राप्त हुआ। उन्होंने वैचारिक अधिष्ठान को ही संगठन का मूल आधार बताया। उन्होंने कहा कि जिनका अधिष्ठान पक्का है वे ही सच्चे कार्यकर्ता बनते हैं। कमजोर को संरक्षण एवं समाज के लिए शुभ ही मेरे लिए शुभ है कि भावना ही हमारी परम्परा है। उन्होंने ट्रेड यूनियन की भांति कार्य न कर विचार के आलोक में व्यापक सामाजिक दृष्टिकोण से कार्य करने का आह्वान किया। अभ्यास वर्ग में तीन सत्रों में चक्रीय बैठकें हुई जिन में अखिल भारतीय शैक्षिक महासंघ के राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री महेन्द्र कपूर, श्री हनुमानसिंह एवं श्री ग्यारसीलाल जाट का मार्ग दर्शन मिला। इन बैठकों में संगठन भाव, संगठन में कार्यकर्ताओं के दायित्व, कार्यक्रम योजना, सदस्यता एवं संगठन विस्तार शैक्षिक उन्नयन के कार्यक्रम को आयोजित करने एवं शिक्षकों की समस्याओं को प्रस्तुत करने आदि पर चर्चा की गई।

अगले सत्र में राजस्थान विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. जे.पी.सिंघल ने संगठन के ध्येय वाक्य राष्ट्र हित में शिक्षा शिक्षा हित में शिक्षक, एवं शिक्षक के हित में समाज की विस्तार से व्याख्या की। उन्होंने समाज में शिक्षकों के गिरते सम्मान पर चिन्ता व्यक्त करते हुए प्राचीन काल के समान ही समाज में शिक्षकों की प्रतिष्ठा स्थापित करने के लिए सुआयाम एवं ईमानदारी से दायित्व निर्वहन का आह्वान किया। उन्होंने विभिन्न शिक्षक समस्याओं पर भी चर्चा करते हुए उनके निस्तारण में आने वाली कठिनाओं एवं समाधान की प्रक्रिया को बताया।

अभ्यास वर्ग के अगले दिन आयोजित सत्र में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के राजस्थान क्षेत्र प्रचारक श्री दुर्गादास ने भारत में ज्ञान-विज्ञान की उज्ज्वल परम्परा के विभिन्न तथ्यों को उदाहरणों द्वारा बताया। श्री दुर्गादास ने भारत द्वारा विज्ञान तकनीक, खगोल शास्त्र, चिकित्सा आदि क्षेत्र में स्थापित उपलब्धियों एवं उनके साक्ष्यों को विस्तार से बताते हुए राष्ट्रीय गौरव एवं स्वाभिमान भाव विद्यार्थियों एवं समाज में संचरित करने का आह्वान किया।

इसके पश्चात दायित्वानुसार समूहश: बैठकें आयोजित की गई। इन बैठकों में श्री महेन्द्र कपूर, डॉ. दिग्विजयसिंह एवं डॉ. नारायण लाल गुप्ता द्वारा प्रदेश, विभाग, इकाई के विभिन्न दायित्ववान कार्यकर्ताओं से सांगठनिक अपेक्षाओं पर चर्चा की गई। समारोप सत्र में श्री हनुमान सिंह राठौड़ द्वारा राष्ट्रीय स्वाभिमान एवं अद्यतन ज्ञान युक्त पाठ्यक्रम की आवश्यकता एवं शिक्षक की उसमें भूमिका विषय पर प्रबोधन किया गया। उन्होंने पाठ्यक्रम परिवर्तन को लेकर चल रहे वैचारिक युद्ध में सत्य को स्थापित करने के लिए शिक्षक कार्यकर्ताओं को प्रमाणिकता से कार्य करने का आह्वान किया। उन्होंने बताया कि विगत 6 दशकों से एक विचारधारा विशेष को शिक्षा पर थोप कर राष्ट्रीय स्वाभिमान को छिन्न भिन्न करने का प्रयास हुआ है जिसका परिणाम जे.एन.यू. में हुई राष्ट्रीय विरोधी घटनाएं हैं। हमें राजनीति से निरपेक्ष रहकर भारतीयता के विचार का संचार करते हुए विद्यार्थी को सर्वश्रेष्ठ बनाने का प्रयत्न करना चाहिए। सामूहिक वंदे मातरम् के साथ अभ्यास वर्ग का समापन हुआ। अभ्यास वर्ग में प्रदेश के सभी 18 विभागों से 143 कार्यकर्ता उपस्थित रहे।

## रुक्टा ( राष्ट्रीय ) की सत्र के प्रथम दिवस रिकार्ड सदस्यता

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) की प्रदेश कार्यकारिणी के निर्णयानुसार सत्र 2016-17 के प्रथम दिन 1 जुलाई को अधिकतम सदस्यता दिवस के रूप में बनाते हुए रिकार्ड 4387 सदस्यों की सदस्यता प्राप्त हुई। उल्लेखनीय है कि रुक्टा (राष्ट्रीय) पिछले तीन सत्रों से अपनी सदस्यता केवल जुलाई के प्रथम पखवाड़े में ही संग्रहित करता आ रहा है तथा सत्र के प्रथम दिवस 1 जुलाई को अधिकतम सदस्यता का संग्रहण करता है।

## रुक्टा ( राष्ट्रीय ) के प्रयासों से कॉलेज शिक्षा में प्राचार्य/ उपाचार्य पद की डी.पी.सी. चयनित वेतनमान स्क्रीनिंग सम्पन्न

राजस्थान विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालय शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) महाविद्यालयों में सुचारू व्यवस्था के लिए प्राचार्य एवं उपाचार्य पद पर रिक्त पदों की संख्या अनुसार समयबद्ध डी.पी.सी. की मांग करता आया है। इसी प्रकार जिन शिक्षकों के वरिष्ठ व चयनित वेतनमान बकाया है, उनकी स्क्रीनिंग भी प्रतिवर्ष करवाए जाने के लिए संगठन अपना पक्ष रखता आया है। संगठन के लगातार प्रयासों से गत 31 दिसम्बर को सीकर में आयोजित संगठन के प्रदेश अधिवेशन में उच्च शिक्षा मंत्री श्री कालीचरण सराफ ने इस बाबत् घोषणा की थी। जिसकी परिणति के रूप में 2015-16 के लिए 32 स्नातकोत्तर प्राचार्य 62 स्नातक प्राचार्य, 91 उपाचार्यों तथा 2016-17 के लिए 45 स्नातकोत्तर प्राचार्य, 80 स्नातक प्राचार्य एवं 102 उपाचार्यों की डी.पी.सी. 4 जुलाई 2016 को सम्पन्न हुई।

संगठन महामंत्री डॉ. नारायण लाल गुप्ता ने सरकार का आभार व्यक्त करते हुए आशा की कि प्राचार्य/उपाचार्य पद हेतु अतिशीघ्र पदस्थापन कर दिया जायेगा। 4 जुलाई को ही जून 2013 से जून 2015 के मध्य जिन शिक्षकों का सी.ए.एस. के तहत पदोन्नती होनी शेष है। उनकी स्क्रीनिंग कर 178 शिक्षकों को वरिष्ठ वेतनमान एवं 157 शिक्षकों को चयनित वेतनमान प्रदान किया गया।

## राजस्थान शिक्षक संघ ( राष्ट्रीय ) उदयपुर जिला द्वारा धरना प्रदर्शन

राजस्थान शिक्षक संघ (राष्ट्रीय) के सैंकड़ों शिक्षकों द्वारा उदयपुर जिलाध्यक्ष राजेन्द्रसिंह सारंगदेवोत के नेतृत्व में 3 जून को अभी हाल ही में 6-डी के अन्तर्गत की गई काउन्सलिंग में रही खामियों के विरोध में शिक्षा उपनिदेशक माध्यमिक शिक्षा उदयपुर मण्डल के बाहर धरना, प्रदर्शन कर शिक्षा उपनिदेशक का घेराव करते हुए ज्ञापन सौंपा।

जिला मंत्री बसन्तीलाल श्रीमाली ने जानकारी देते हुए बताया कि उदयपुर जिले की 23 उपशाखाओं से आये सैंकड़ों शिक्षकों ने शिक्षा उपनिदेशक माध्यमिक शिक्षा के बाहर संगठन द्वारा 6-डी की काउन्सलिंग में हुई गडबड़ियों का विरोध करते हुए प्रदर्शन किया। जिला शिक्षा अधिकारी मा. प्रथम द्वारा काउन्सलिंग में की गई भारी अनियमितताओं का विरोध करते हुए बताया कि काउन्सलिंग में लेवल-1 में आने वाले शिक्षकों को लेवल-2 में बताकर पदस्थापित कर देना, एसएसपी से नान टीएसपी में पदस्थापना कर देना शिक्षकों के विषय न होते हुए भी पदस्थापित कर देना, माध्यमिक सेटअप में पहले से ही कार्यरत शिक्षकों को अन्य विद्यालयों में पदस्थापित कर देना, एकल, विकलांग, परित्यक्ता महिलाओं को दूरस्थ स्थानों पर पदस्थापित कर देना, अनुदानित शिक्षण संस्थाओं से विभाग में 2011 आये शिक्षकों के काउन्सलिंग में डालकर अन्यत्र पदस्थापित कर देना, कॉमर्स के कुछ शिक्षकों को काउन्सलिंग करते हुए पदस्थापित कर देना आदि कई अनियमितताएँ की गई।

शिक्षा उपनिदेशक ने ज्ञापन में प्रस्तुत माँग पत्र को मेल कर शिक्षा निदेशक से मार्गदर्शन माँगा तथा शिक्षक हित में उचित कार्यवाही करने का आश्वासन दिया।

## म.प्र. शिक्षक संघ खरगोन जिले का कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग सम्पन्न

म. प्र. शिक्षक संघ खरगोन जिले का तीन दिवसीय कार्यकर्ता अभ्यास वर्ग निमाड़ के प्रसिद्ध राम कथा वाचक श्री मोहन भाई जी की अध्यक्षता राजेन्द्र बड़ोले प्राचार्य सरस्वती विद्या मन्दिर खरगोन के मुख्य आतिथ्य में सम्पन्न हुआ।

तीन दिन के आठ सत्रों में सम्पन्न वर्ग में संगठन की जिला, तहसील, ब्लॉक के अध्यक्ष सचिव कोषाध्यक्ष संगठन मंत्री अपेक्षित थे। यह पूर्णत: आवासीय होकर 75 कार्यकर्ता शामिल हुए। शिक्षा में शाश्वत जीवन मूल्य, राष्ट्र निर्माण में शिक्षक की भूमिका, कर्तव्य बोध, संगठन की रीति नीति, कार्यपद्धति जैसे आठ विषय पर अलग अलग वरिष्ठ पदाधिकारियों द्वारा मार्गदर्शन किया गया।

समापन सत्र को सम्बोधित करते हुए मुख्य वक्ता श्री बड़ोले ने कहा कि जब अबोध बालक को विद्यालय में प्रवेश कराते समय माँ, शिक्षक को बच्चा सौंपती है तब रोते बच्चे को क्या बनाने के सपने के विश्वास के साथ वह कठोर दिल करती है उसकी कल्पना कर हमें बच्चों को पढ़ाना चाहिए। शिक्षकत्व वृति है व्यवसाय नही है। व्यवसाय में सुख की चाह कर सकते हैं परन्तु वृति में नहीं। इसलिए जिस राष्ट्र का शिक्षक सुख चाहता है उस राष्ट्र का विनाश हो जाता है। शिक्षक के बिना किसी राष्ट्र का निर्माण असम्भव है।

अध्यक्षीय सम्बोधन में परम् पूज्य मोहन भाई ने शिक्षक को सर्वशक्तिमान बताया। शिक्षक को प्रेम आत्मीयता उदारता व समर्पण भाव से बालक के सर्वांगीण विकास करना चाहिए। संगठन के कार्यकर्ता के रूप में हमारे विचारों से ही हम पहचाने जाए कि हम म.प्र. शिक्षक संघ के कार्यकर्ता है। हमें व्यक्ति के बजाय विचार के नाते संगठन में जुड़कर कार्य करना चाहिए। वर्ग के महाप्रबन्धक संघ के जिला सचिव रमेश पाटीदार व वर्गाधिकारी जगदीश भावसार थे। संचालन रमेश दुबे ने किया। आभार वर्गाधिकारी जगदीश भावसार ने किया। वर्ग के सम्पूर्ण आयोजन व विषयों के प्रबोधन में प्रांतीय कोषाध्यक्ष लछीराम इंगले व मालवा प्रान्त संगठन मंत्री हीरालाल तिरोले मार्गदर्शन हेतु उपस्थित रहे।

## हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ की राज्य कार्यकारिणी बैठक शिमला में सम्पन्न

हिमाचल प्रदेश शिक्षक महासंघ की राज्य कार्यकारिणी बैठक दिनांक 19 जून, 2016 को शिमला स्थित कुसुम्पटी में आयोजित की गई जिसमें अखिल भारतीय राष्ट्रीय शैक्षिक महासंघ के आन्तरिक अंकेक्षक एवं प्रान्त संगठन मन्त्री पवन मिश्रा का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ। बैठक तीन सत्रों में सम्पन्न हुई, शुभारम्भ दीप प्रज्वलन से किया गया।

बैठक में वर्ष भर में होने वाले प्रान्त व जिला कार्यक्रमों की विस्तृत चर्चा कर तिथियाँ निश्चित की। इनमें जिलों में होने गुरु वन्दन, प्रतिभा सम्मान समारोह, जिला बैठकें शामिल हैं। समापन सत्र में प्रान्त अध्यक्ष रजनीश चौधरी ने संगठन, कार्यक्रम और कार्यकर्ता के विषय में अपने विचार साझा करते हुए कहा, 'जब तक हम स्कूल स्तर पर नया कार्यकर्ता तैयार नहीं करेंगे तब तक संगठन अधूरा है।' उन्होंने सब से अनुरोध किया कि कार्यकर्ता संगठन के कार्यक्रम अपने स्कूल में भी मनायें जिससे संगठन का विचार बच्चों के माध्यम से घर-घर पहुँचेगा।

अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में पवन मिश्रा ने शिक्षकों की समस्याओं पर सभी से मिलकर चर्चा की। उसके बाद संगठन को मजबूत बनाने के टिप्स देते हुए कहा, 'समाज हित के लिए कार्य करने के लिए कार्यकर्ता को तन-मन-धन से कार्य करना पड़ता है। यदि 15-20 लोग संगठित होकर चलेंगे तो संगठन निश्चित रूप से आगे बढ़ेगा।'